तृतीय अध्याय–3

पखावज के विभिन्न घराने एवं परम्पराये

तृतीय अध्याय– पखावज के विभिन्न घराने एवं परम्पराएं

प्राचीन समय से ही गुरू शिष्य परम्परा का महत्व रहा है। प्राचीन समय में विद्याध्ययन गुरूकुलों में होता था। शिष्य गुरू के आश्रम में रहकर शिक्षा प्राप्त करता था और गुरू अपने शिष्यों को पुत्र तुल्य शिक्षा प्रदान करते थें। संगीत के सदंर्भ में संगीत को साधना माना गया है प्राचीन समय से संगीत समाज में विद्यमान रहा है। चाहे सामाजिक कार्य हो या आध्यात्मिक कार्य। संगीत की शिक्षा प्राप्त करने के लिए शिष्य गुरू के सानिध्य में शिक्षा प्राप्त करता था। फिर वह अपने शिष्यो को वही शिक्षा देता था। इस प्रकार शिष्य परम्परा चल रही थी, मध्यकाल आते–आते भारतीय संगीत के अनेक पक्ष लुप्त हो गए और गुरू शिष्य परम्परा का यह प्राचीनतम रूप परिवार्तित होकर घरानेदार संगीत परम्परा के रूप में विकसित हो गया।

वर्तमान समय में संगीत ही एक ऐसी कला है जहाँ घराना घरानेदार संगीत शब्द का उल्लेख मिलता है किसी अन्य कलाओं जैसे– वस्तुकला, चित्रकला आदि कलाओं में घराने नही होते। संगीत की तीनों विधाओं में चाहे गायन हो, वादन हो, नृत्य सभी क्षेत्रों में घरानेदार संगीत ही चलता आ रहा है।

घराने के अन्तर्गत किसी विशेष गुरू के शिष्यों वंशजो का परिवार आता है जिन्होंने उस गुरू विशेष से शिक्षा प्राप्त किया है। आज संगीत में जितने भी महान कलाकार हुये है वह सभी घरानेदार परम्परा से सम्बन्धित है। घराने का प्रचलन उत्तर और दक्षिण दोनो पद्धति में है। उत्तर में जिसे घराना कहते है दक्षिण में वही सम्प्रदाय कहा जाता है।

घराने की उत्पत्ति कैसे हुई किसने की किस प्रकार इसका विकास हुआ इस सब का ठीक–ठीक उत्तर देना कठिन है इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण भी नही मिलता। वैसे यह माना जाता है कि घराना प्राचीन काल से ही संगीत में किसी न किसी रूप में रहा है। किन्तु इसका स्वरूप थोड़ा भिन्न–भिन्न था। प्राचीन मध्यकाल में प्रचलित मत या वाणी को घराने का ही पर्याय माना जाता हैं, प्राचीन समय में

भरतमत, शिवमत, हनुमन्तमत, नारदमत मध्ययुग में नौहर वाणी, डागुरवाणी, गोबरवाणी, खण्डरवाणी यह भी एक प्रकार के घराने ही थे। प्राचीन काल में दलित, कोहल, मतंग तथा अभिनव गुप्त भरत सम्प्रदाय के अनुयायी थे सम्प्रदाय का ये महत्व प्राचीन काल से लेकर आज तक चलता आ रहा है तब इसका स्वरूप थोड़ा भिन्न था।

डॉ0 नागेश्वर लाल कर्ण के अनुसार– भरत नंदिकेशन कोहल, नारद, मतंग, शारंगदेव ये सभी प्रख्यात शास्त्रकार थे और इनकी संगति कला अपनी विशेषताओं के कारण अलग–अलग चिहित थी। आधुनिक युग की परिभाषा के अनुसार इन्हे अलग–अलग घरानों के प्रवर्तक कहा जा सकता है।''[1] किन्तु घराने का स्पष्ट प्रमाण प्राचीन और मध्य काल के ग्रन्थों में नही मिलता। मध्यकाल के बाद के ग्रन्थों में घरानेदार संगीत का उल्लेख मिलता है। पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे अपने संगीत शास्त्र मे लिखते है कि संगीत में घरानो का उल्लेख हकीम मोहम्मद करम इमाम की पुस्तक मऊदन – उल्लेख मूसिकी में मिलता है जो सन् 1857 के आस–पास लिखी गयी थी।

श्री ललित किशोर सिंह ने ध्वनि और संगीत में लिखा है कि ''तानसेन के बेटे विलास खाँ से प्रसिद्ध रबाबियो का घराना चला और उनके छोटे बेटे सुरसेन से सितारियों का। ये सोनिया घराने के नाम से प्रसिद्ध है।[2] तानसेन के बाद ही घराने अस्तित्व में आने लगे थे।[2]

घराने की उत्पत्ति के विषय में श्री भगवत् शरण शर्मा के अनुसार ''संगीत में घरानों की नींव आठवी से बारहवी शताब्दी के बीच राजपूत काल में पड़ चुकी थी। अपनी बात का समर्थन करते हुए वे लिखते है'' राजपूत काल में (8वीं से 12वीं शताब्दी) संगीतकारों को राज दरबारों में आश्रय मिला करता था। अतः इस युग का संगीत अधिकतर राजाश्रय में ही उन्नति कर सका। इस काल के कलाकार अपने संगीत ज्ञान को इतना छिपाकर रखते थे कि वे किसी अन्य जाति वालों को तो क्या

1– कथक नृत्य के साथ तबला संगति डॉ0 नागेश्वर लाल कर्ण पेज सं–112, 113 प्रकाशक कनिष्का पबिलशस डिस्ट्रीब्यूर्स, नई दिल्ली।

2– पखावज और तबला के घराने एवं परम्परायें डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री– पेज सं0–4 प्रकाशक पं0 केकी0 एस0 जिजिना स्वर साधना समितिजर एनेक्स जम्बुलवाडी मुम्बई।

अपनी ही जाति वालों तक को बताने में संकोच करते थे। यह संकीर्णता यहाँ तक बढ़ी कि वे संगीत के ग्रंथ भी नहीं लिखते थें। उनका संगीत पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता था। यदि वे निःसन्तान होते तो उनका संगीत भी उन्ही के साथ समाप्त हो जात था। इस संकीर्ण मनोवृत्ति के फलस्वरूप संगीत के क्षेत्र में घरानों की नींव पड़ गयी और इस परिपाठी ने संगीत के विकास को अवरूद्ध का दिया।[1] कलाकारों की इसी संकीर्ण मनोवृत्ति की ओर संकेत करते हुए श्री उमेश जोशी ने कहा कि ''घरानों की उत्पत्ति संगीत के विकास के ख्याल से नहीं हुई अपितु इसकी पृष्ठभूमि में कलाकार की संकीर्णता उसकी स्वार्थता एवं उसकी बुद्धिहीनता भरी हुई है।[2]

घराने में परम्परा का विशेष स्थान रहा है। ''घराने परम्परा के संकेत अथवा प्रतीक है और परम्परागत संगीत के प्रतिनिधि भी हैं। इसलिए प्रतिष्ठित घरानेदार गायक परम्परागत संगीत के स्तम्भ हैं और उसकी जिन्दा तस्वीरें अथवा जीवित चित्र हैं। एक संगीत के विद्वान, समालोचक ने एक महान्, सर्वश्रेष्ठ गायक के बारे में कहा था कि वह 'मुज़सिम संगीत' अथवा संगीत की सजीव प्रतिमूर्ति था। इस सारगर्भित कथन में ही घराने की सही और सच्ची परिभाषा मिलती है। घराने संगीत की परम्परा की सजीव मूर्ति हैं। घराने परम्परा की निरन्तरता और उसकी अविच्छिन्नता का रूप हैं। घरानों ही से पता चहता है कि संगीत की परम्परा जीवित है।[3]

श्री वामनराव देशपांडे घराने के विषय में लिखते हैः– Every up coming aritste always passesses some heritage handed down by tradition to which be makes his owu addition if he achives eminence and sets up his own school of followers, he becomes a pioner of new style.[4]

1– भारतीय संगीत का इतिहास पं0 भगवतशरण शर्मा पेज सं0 51–52 प्रकाशन, संगीत कार्यालय हाथरास

2– भारतीय संगीत का इतिहास श्री उमेश जोशी पेज सं0– 383 प्रकाशन मानसरोवर प्रकाशन, प्रतिष्ठान फिरोजाबाद (उ0प्र0)

3– हमारा आधुनिक संगीत सुशील कुमार चौबे पृ0सं0 216 प्रकाशक ब्रह्मदत्त दीक्षित उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

4– पखावज और तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री– पेज सं0 10–11 प्रकाशन, पं0 केकी0 एस0 जिजिना स्वर साधना समिति जर एनेक्स जम्बुलवाडी मुम्बई।

मध्यकाल में किसी भी कवियों की रचना में घराना शब्द का उल्लेख, प्रयोग नही मिलता। परन्तु घर और कुल का उल्लेख तुलसीदास की रचना में मिलता हैं,

जो घर वर कुल होय अनूपा
कारिये विवाह सुता अनुरूपा।

हमारा आधुनिक संगीत में डॉ0 सुशील कुमार चौबे ने ग्वालियर घराने की उत्पत्ति 19वीं सदी से माना हैं। तबले का प्रथम घराना दिल्ली घराना माना जाता हैं। दिल्ली घराने के अन्वेषक और पूर्वज सिद्धार खाँ माने जाते है जिनका समय मोहम्मद शाह रंगीले के आस–पास का है। इस प्रकार तबले का प्रथम घराना तीन सौ साल से अधिक पुराना नहीं मालूम होता। इस प्रकार चाहे ग्वालियार, किराना, जयपुर आदि गायन का घराना हो चाहे तबले का दिल्ली, बनारस, लखनऊ, फर्रूखाबाद हो या पखावज का कुदऊ सिंह, नाना पानसे, मथुरा का कोरिया घराना या पंजाब घराना। ये सभी घराने मुगल काल कें अंतिम समय तक अस्तित्व में आये।

शम्भुनाथ मिश्र के अनुसार– घरानों की परम्परा है तो पुरानी, मगर इसे महत्व मिला सोलहवीं सदी के बाद। उस जमाने में उत्तर भारत के संगीतज्ञ अलग–अलग रियासतों–रजवाड़ों के संरक्षण में रहा करते थे। इन रियासतो के शासक अपने संगीतज्ञों के दूसरी रियासत में जाने के खिलाफ थे। इसलिए संगीतज्ञों को एक प्रकार से एक ही रियासत या रजवाड़े में कैदी सा जीवन बिताने को मजबूर होना पड़ा। इसका एक असर यह हुआ कि उन्हे समय काटने के लिए सिवाय रियाज करने या राजा के सम्मुख गाने और अपने गायन को ज्यादा से ज्यादा सुमधुर बनाने के अलावा और कोई काम नही था। यह परम्परा कई पीढ़ियो तक चलती रही और संगीतज्ञ के निजी गुण या अन्य प्रभाव के कारण गायकी में संशोधन होता रहा। एक ऐकांतिक रियाज के फलस्वरूप संगीत की अलग–अलग गायकी और प्रणाली विकसित हुई।[1]

1– हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की घराना परम्परा शम्भुनाथ मिश्र पेज सं0 2, 3 प्रकाशन, सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार

घराने की परिभाषा

घराना शब्द संस्कृत भाषा के गृह हिन्दी भाषा के घर से बना है, घर का अर्थ है आवास, वंश अथवा निश्चित परम्परा। घराना शैली का ही पर्यायवाची नाम है। घराने का मूल तत्व अनुकरण है।

संस्कृत वाक्य, वंशों द्विविधा जन्मना विधया च अर्थात वंश या कुल दो प्रकार से चलता है एक जन्म से और दूसरा विद्या से। जिस प्रकार एक परिवार में जन्में सभी व्यक्तियों का समूह एक परिवार या घराना होता है, उसी प्रकार एक गुरू से विद्या प्राप्त करने सभी शिष्यों का समूह एक परिवार या घराना होता है।[1] संगीत एक ऐसी कला है जो किसी परम्परा विशेष से बिना प्राप्त होना मुश्किल है। अतः संगीत में घराने का रहना स्वाभाविक है। घराना शब्द की व्याख्या एवं परिभाषा अनेक संगीतज्ञों ने इस प्रकार की है।

बाबू भाई बैकर–साधारण रूप में घराना शब्द का अर्थ है वर्ग, संप्रदाय, परिवार, कुटुम्ब, वंश, परम्परा, घर आदि। अर्थात मानव समाज की एक वर्ग स्वरूप इकाई।[2] शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में घराना शब्द इन्हीं में से किसी एक या अनेक अर्थो के साथ सम्बद्ध प्रतीत होता है। कुछ विद्धानों ने घराना शब्द का अर्थ घर माना है।

शरच्चंद्र श्रीधर परांजपे के अनुसार, 'घराना' रीति या शैली का ही दूसरा नाम है। घराना एक विशिष्ट गायन–शैली का सूचक होता है। यह शैली या रीति जिस कलाकार के द्वारा प्रवर्तित होती है, वह ही उसके संस्थापक माने जाते हैं और उन्हीं के नाम से अथवा निवास–स्थान से घराने का नामकरण होता है। घराने का सूत्रपात तब होता है, जब घराने की शैली में कोई विलक्षणता हो। घराना स्थिर तब होता है, जब इस शैली का अनुसरण करने वाला शिष्य–समुदाय हो।[3]

1– ताल परिचय भाग– 3 आचार्य गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव पेज 40 प्रकाशन रूपी प्रकाशन बी–629 गुरू तेज बहादुर नगर (करेली) इलाहाबाद

2– संगीत घराना अंक जनवरी, फरवरी 1982 बाबू भाई बैकर प्रकाशक संगीत कार्यालय हाथरस।

3– हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की घराना परम्परा शम्भुनाथ मिश्र पेज सं0 4 प्रकाशन, सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार

विद्वान वमनराव देशपाण्डेय के अनुसार "Ghrama Literally a Family, a term applied to a school of music comprising a creatively innociating founder his public and those who follow in the line of discipleship?[1]

घराने की शिक्षा में अनुशासन का बहुत महत्व था ''गुरू शिष्य की सीना–व–सीना तालीम देता था और शिष्य भी बड़ी श्रद्धा से कला की खूबियों को बटोरता रहता था। उस्ताद की सारी विशेषताएँ शागिर्द के कंठ अथवा हाथ में आ जाती थीं और यह आना जरूरी भी माना जाता था। उस्ताद का यह प्रयत्न होता था कि शागिर्द उसकी हूबहू तस्वीर बने। इसी लिहाज से तालीम पूरी होने तक शागिर्द को किसी दूसरे घराने का संगीत सुनने की इजाजत नहीं मिलती थी। उस्ताद कभी बर्दाश्त नही कर सकता था कि उसका पुत्र, वंशज या शागिर्द किसी दूसरे की गायकी गाये।[2]

डॉ0 सुशील कुमार चौबे अपनी पुस्तक संगीत के घराने की चर्चा में लिखते है। यदि आधुनिक हिन्दुस्तानी संगीत को इस घरानेदार संगीत का सहारा न मिलता और न उसको कोई प्रोत्साहन ही मिलता तो वह सचमुच निर्जीव अथवा बेजान बन जाता। घरानेदार संगीत ही ने इस संगीत में प्राण फूँका है और उसे जीवन प्रदान किया है। उसे ने इसे सजीव बना रखा है। जो कुछ भी गतिशील जीवन हमारे संगीत में अब तक है उसका पोषक हमारा परम्परागत, घरानेदार संगीत ही रहा है। बगैर उसके न इसमें जान होती औन र कोई स्फूर्ति होती। जहाँ तक आधुनिक संगीत पर घरानेदार संगीत की अमिट छाप पड़ी है।[3]

किसी भी घराने में 'गुरू' या 'उस्ताद' केन्द्र–बिन्दु होता है। उस्ताद के गुणों के साथ उसकी बुराइयों को अपनाने में शागिर्द हिचकिचाता नहीं, बल्कि वह आत्मसात् करने में शान महसूस करता है। शारीरिक ऐब व व्यंग्य के कारण यदि

1– ताल परिचय भाग–3 आचार्य गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव पृ0सं0 40 प्रकाशक रूबी प्रकाशन बी 623 गुरू तेज बहादुर नगर (करेली) इलाहाबाद

2– संगीत मैनुअल मृत्युजय शर्मा, राम नारायण त्रिपाठी, पृ0सं0 264, 265 प्रकाशक एच0जी0 पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

3– संगीत के घराने की चर्चा सुशील कुमार चौबे पृ0सं0 11, प्रकाशक उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान।

उस्ताद में कोई दोष आ जाये तो शागिर्द भी उसे तुरन्त आत्मसात् कर लेता है।[1]

डॉ0 आवाम ई0 मिस्त्री ने घराने की परम्परा बढ़ने का कारण इस प्रकार बताया हैं घराने का मूल प्रवर्तक अपने वंश तथा शिष्यों को अपनी सारी विशेषतायें बताकर तैयार करता है। आगे वह शिष्य अपनी योग्यता और प्रतिभानुसार गुरू की विद्या को अधिक समृद्धि करता है और उसे अपने शिष्यों को सिखाता है और इस तरह घराने की परम्परा फलत–फूलती है।[2]

घराना तभी बनता है। जब तीन पीढ़ियो तक यह परम्परा चलती रहे इसी सम्बन्ध में शम्भुनाथ मिश्र ने लिखा है। ''सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ भास्कर बुवा बखले ने संगीत की एक अलग शैली निकाली थी। उनके एक सुयोग्य शिष्य भी थे जिसका नाम था मास्टर कृष्णराव फुलबरीकर। लेकिन तीसरी पीढ़ी में कोई उल्लेखनीय गायक नही हुआ और भास्कर बुवा बखले का घराना नही बन सका।[3]

इस प्रकार तबला में अल्लारखाँ खाँ जिन्हे पद्मश्री उस्ताद अहमद जान थिरकवा जिन्हे पद्यभूषण जैसे महान सम्मान मिला किन्तु ये महान कलाकार केवल अपने घराने की परम्परागत शैली का ही निर्वाह किया। इसके विपरीत कुदऊ सिंह महराज ने लाला भवानीदी से शिक्षा प्राप्त की और वादन की नई शैली विकसित की और एक नया घराना स्थापित किया और कुदऊ सिंह के शिष्यों ने इस परम्परा का निर्वाह किया। इसी प्रकार नाना पानसे ने भी नवीन शैली विकसित कर एक नवीन घराना बनाया।

घरानों की उत्पत्ति के अन्य कारणों पर यदि विचार किया जाए तो प्राप्त मतों के आधार पर निम्नलिखित रूप से कुछ मुख्य कारण सामने आते हैंः–

1– संगीत बोध डॉ0 शरच्चन्द्र पराजये श्रीधर पृ0सं0 183 प्रकाशक मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

2– पखावज और तबला के घराने एवं परम्परायये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0–12 प्रकाशन के0 की0 एस0 जिजिना स्वर साधना समिति एनेक्स जम्बुलवाडी, मुम्बई।

3– हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की घराना परम्परा शम्भुनाथ मिश्र पृ0सं0 3 प्रकाशन, सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार।

1. राजनीतिक परिस्थितियों के कारण संगीतज्ञों में संकीर्णता व परस्पर प्रतिस्पर्धा, प्रतिद्वन्द्वित के कारण घरानों का उदय हुआ।

2. मुसलमानों के शासन काल में दरबारी संगीतज्ञों का उदय होने से 'संगीतजीवी' व दरबार के बाहर ''संगीतोपासक गायकों के रूप में गायकों के दो वर्ग बन गए। विभिन्न राज्यों में संगीतजीवी वर्ग द्वारा विकसित संगीत में गान शैलियों की विविधता के कारण घराने बने।

3. मुसलमानो गायकों के हिन्दू साहित्य, संस्कृति व भाषा के अनभिज्ञ होने के कारण भिन्न–भिन्न प्रयोंगों से ही विशिष्ट गायकियों को प्रोत्साहन मिलने के फलस्वरूप घरानों का प्रादुर्भाव हुआ।

4. बादशाहों को प्रसन्न करने के लिए दरबारी प्रतियोगिताओं को जीतने के लिए बाध्य होने के कारण भिन्न–भिन्न, नए–नए चमत्कारिक स्वर प्रयोग के फलस्वरूप प्रस्तुतीकरण में भेद के कारण घरानों का जन्म हुआ।

5. कभी–कभी कंठध्वनि के दोष या स्वभाविक सीमाओं के कारण अपनी पहुँच में आने वाले गायन प्रकारों को चमकीला बनाने के प्रयत्न में अनायास ही गायकी विशेषता को ही पूर्णतः अपनाने के विश्वास के कारण घरानों का जन्म हुआ।[1]

इस प्रकार एक नवीन घराना तब बनता है जब शिष्य परम्परगत शैली जो उन्होने अपने गुरू से सीखे उसमें स्वयं की कलात्मकता, सौन्दर्य विकसित कर अपनी शैली में नवीनता डालकर निखार लाता है जो उस घराने के बाकी शिष्य नही कर पाते। इसी नवीन शैली का निर्वाह जब अनेकों शिष्य करते है तब एक नवीन घराने की उत्पत्ति होती है।

1– भारतीय संगीत की परम्परा वंशानुक्रम एवं वातावरण डॉ0 हरीकिशन गोस्वामी पृ0सं0 14 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

जावली घराना

अकबर के काल में लाला भगवानदास नाम के एक विख्यात मृदंगवादक हुये। ये तानसेन के समकालीन थे तथा सम्राट अकबर के आग्रह पर स्थायी रूप से दिल्ली में रहने लगे थे। अयोध्या के पखावज वादक स्वामी पागलदास एवं बरेली के डॉ0 रमावल्लभ मिश्र ने एक साक्षात्कार में ऐसा संदेह व्यक्त किया है कि भगवानदास स्वामी हरिदास के शिष्य रहे हों किन्तु यह तथ्य सत्य प्रतीत नही होता, क्योंकि स्वामी हरिदास के शिष्यों की सूची में मृदंग वादक भगवान दास का नाम कही नही मिलता।[1]

नाथद्वारा (राजस्थान) के मृदंग वादक पं0 मूलचन्द्र जी के अनुसार वे ब्रज के श्याम जी मृदंग वादके के शिष्य थे जिन्हे दास जी भी कहा जाता था। उनके अनुसार प्राचीन काल के अनेक विद्वान एवं गुणी मृदंग वादक भगवानदास को ब्रज परम्परा से सम्बन्धित बताते हैं। परन्तु इस कथन में भी संशय है क्योंकि ब्रज की हस्तलिपि पोथी जिसे पं0 छेदाराम मृदंग वादक ने लिखा था उसमें कही भी श्याम जी मृदंग वादक का उल्लेख नही मिलता। भारत के सभी मृदंग घरानों एवं परम्पराओ का उद्‌गम स्थल ब्रज भूमि है, इस बात का प्रमाण उसमें अवश्य उपलब्ध है परन्तु भगवानदास के विषय में कोई उल्लेख नही है।[2]

ब्रज परम्परा के आदि पुरूष जो कि कोढिया थे और उनका नाम पोथी में उल्लेखित नहीं है वह भगवानदास जी ही हों जिन्होने महाप्रभु बल्लभाचार्य जी के आशीर्वाद से स्वस्थ्य हो जाने के बाद मृदंग वादन में निपुणता प्राप्त कर ली हो एवं दिल्ली दरबार में तानसेन के साथ संगति करने लगे हों किन्तु भगवानदास की परम्परा दिल्ली में और कोढ़िया की परम्पर मथुरा में विकसित हुई है उपर्युक्त तथ्य भी सारहीन प्रतीत होती है।[3]

1– पखावज की उत्पत्ति, विकास एवं वादन शैलियां डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 142 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

2– पखावज और तबला के घराने एवं परम्परायये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 36 प्रकाशन के0 की0 एस0 जिजिना स्वर साधना समिति एनेक्स जम्बुलवाडी, मुम्बई।

3– पखावज की उत्पत्ति, विकास एवं वादन शैलियां डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 142 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

कहा जाता है कि भगवानदास के दो पुत्र थे। अकबर बादशाह ने प्रसन्न होकर उनको सिंह की उपाधि प्रदान की थी तभी से उनके वंश को प्रत्येक कलाकार के नाम के आगे सिंह की उपाधि लगाने की प्रथा चल पड़ी।

लाला भगवानदास जी को सम्राट अकबर ने जावली ग्राम को उपहार के रूप में दिया था। इस प्रकार उनकी परम्परा जावली घराना के नाम से प्रसिद्ध हो गयी।[1]

लाला भगवानदास के प्रशिष्यों में कृपाल राय का नाम आता है। कृपाय राय को औरंगजेब ने मृदंगराय की उपाधि से सम्मानित किया था। कृपाल राय के शिष्यों में घासीराम तथा लाला भवानीदीन अथवा भवानीसिंह का नाम आता है कदाचित् लाला भवानीदीन या भवानी सिंह भगवानदास जी के वंशज भी हो सकते है। आधुनिक संगीत शास्त्री लाला भवानीदीन को मृदंग की आधुनिक समस्त परम्पराओं के प्रेरणास्त्रोत मानते है।[2]

आज से दो शदीं पूर्व लाला भगवानदास की वंश अथवा शिष्य परम्परा में पहाड़सिंह नामक एक उच्चकोटि के कलाकार हुए। अनुमानतः वे भवानीदीन तथा घासीराम के समकालीन थे। पहाड़ सिंह जोधपुर के दरबारी कलाकार थे। वे कुछ वर्षो तक नाथद्वारा के मन्दिर में श्री नाथ जी की सेवा में भी रत रहे। श्री घनश्याम मृदंग वादक द्वारा रचित मृदंग सागर में उनके विषय में विस्तृत जानकारी उपलब्ध होती है। पहाड़ सिंह के पुत्र जौहार सिंह भी कुशल मृदंग वादक थे जो अपने पिता के साथ जोधपुर दरबार में नियुक्त थे। नाथद्वारा के मृदंगाचार्यो की परम्परा में पहाड़ सिंह की भी विद्या का कुछ अंश संचित है क्योंकि नाथद्वारे के पं0 रूपराम जी ने उनसे शिक्षा प्राप्त की थी।[3]

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 60 अनुभव प्रकाशक पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

2– पखावज की उत्पत्ति, विकास एवं वादन शैलियां डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 143 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

3– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 37 प्रकाशक पं0 के0की0 एस0 जिजिना मुम्बई।

लाला भगवानदीन के उत्तर भारत में अनेक प्रतिभा सम्पन्न एवं प्रसिद्ध शिष्य हुए जिनमें ताजखाँ डेरेदार, कादिर बख्श तथा हद्दू खाँ लाहौर वाले अमीर अली आदि पंजाबी शिष्य कुदऊ सिंह महाराज जैसे समर्थ मृदंग वादक और बाबू जोधसिंह जैसे विद्वानों का समावेश होता हैं।

भवानीदीन जी के पश्चात कुदऊ सिंह ने अपनी नवीन वादन शैली एवं नवीन परम्परा का अविष्कार किया जो उनके शिष्यों प्रशिष्यों में फैलाकर कुदऊ सिंह घराने के नाम से प्रसिद्ध हुइ। ताज खाँ तथा कुछ अन्य पंजाबी शिष्यों से पंजाब की परम्परा फैली। जोधसिंह के शिष्य नानापान से एक नवीन घराने की नींव डाली जो नानापान से घराने के नाम से प्रसिद्ध हुई। बाबू जोधसिंह जी के लिए कुछ विद्वानों का कहना है कि वे लाला भगवानदीन के शिष्य नही थे।[1]

राग–दर्पण में फकीरूल्लाह ने एक शतायु पखावजी भगवानदास की चर्चा की है। यह अकबर युगीन श्रेष्ठ कलाकार थे और तानसेन की संगत किया करते थे।[2]

इस प्रकार यह तो सिद्ध हो जाता है कि तानसेन के समकालीन भगवान दास नाम के कोई मृदंग वादक थे। इनके तथा इनके शिष्यों द्वारा पखावज के विभिन्न घरानों की नींव पड़ी। यह बात अलग है कि जावली घराने के विषय में किसी ग्रंथ में कोई प्रमाणित तथ्य प्राप्त नही होता है। इसके अतिरिक्त किसी कलाकार से भी इस सन्दर्भ में कोई विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है मृदंग सागर में भी जावली घराने के सम्बन्ध में कोई जानकारी प्राप्त नही होता है।[3]

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 61 प्रकाशक पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

2– छायानट अंक 66 जुलाई, सितम्बर 1993 राजा छत्रपति सिंह पृ0सं0 40 प्रकाशक उत्तर प्रदेश नाटक अकादमी।

3– पखावज की उत्पत्ति, विकास एवं वादन शैलियां डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 144 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

जावली घराना

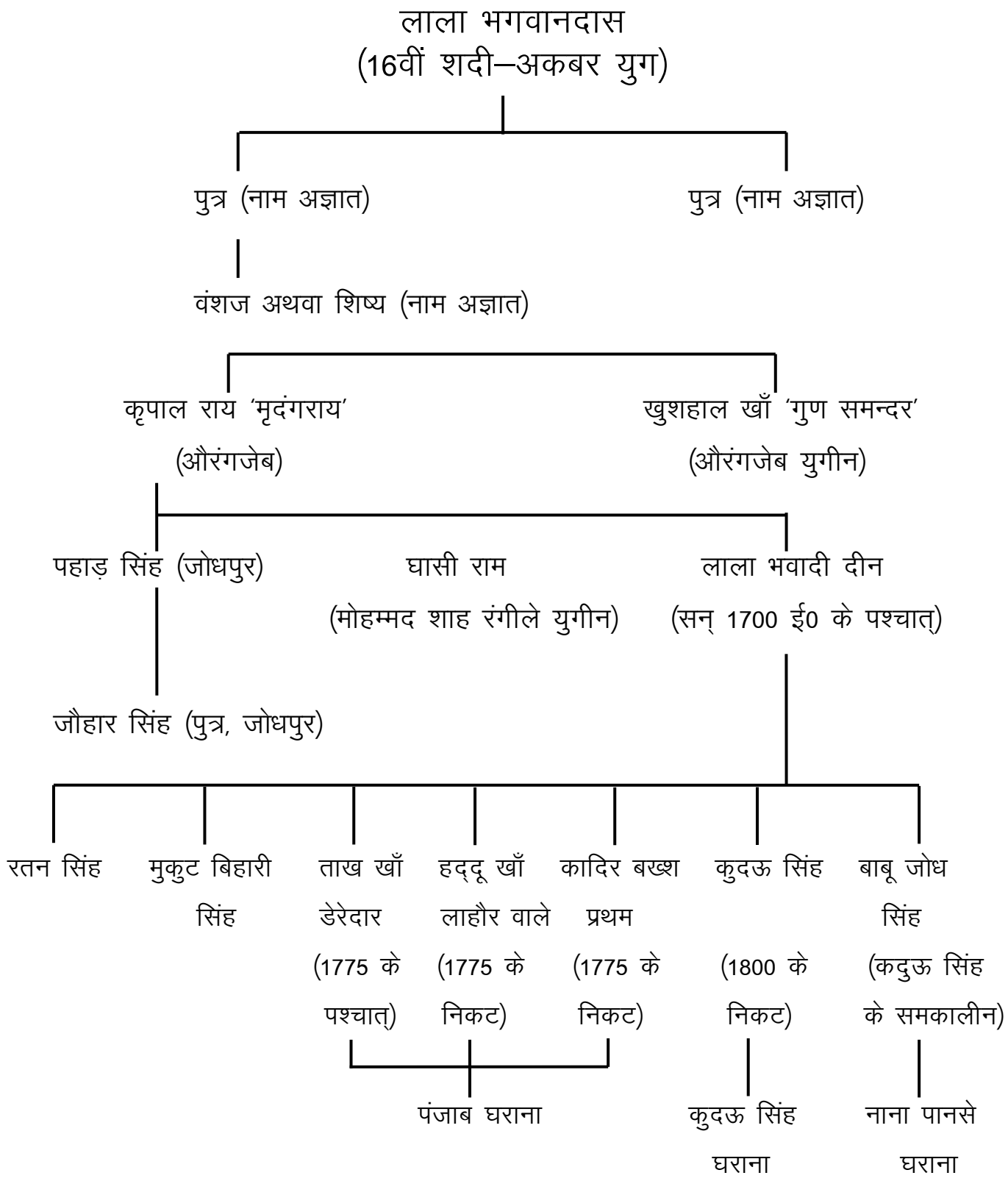

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 67 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद।

ब्रज के वैष्णव सम्प्रदाय की परम्पराये।

पुष्टिमार्गीय वैष्णव सम्प्रदाय– पृष्टिमार्गीय वैष्णव सम्प्रदाय की हवेलियों मन्दिरो में पिछले 500 वर्षो से ध्रुपद धमार एवं मृदंग की परम्परा सुरक्षित चली आ रही है। श्री महाप्रभु गोस्वामी बल्लभाचार्य जी द्वारा आरम्भ की गई हवेली संगीत की परम्परा श्री विट्ठन नाथ जी गोसाई के समय से अधिक लोकप्रिय हुई तथा उनके शिष्यों और सम्प्रदाय के कवियों के द्वारा सम्पूर्ण उत्तर भारत में फैल गई। भक्त सूरदास गोस्वामी तुलसीदास परमानन्द दास, गोविन्द स्वामी आदि कविगण उच्च कोटि के संगीतज्ञ भी थे। वल्लभ कुल के गोस्वामी द्वारा वैष्णव सम्प्रदाय के भक्त जन सदैव संगीत के उपासक रहे है। वहाँ ध्रुपद धमार गायन शैली में कृष्ण लीला का वर्णन तथा भक्ति प्रदान गायकी में भक्तों के साथ मृदंग की संगति भी कई पीढ़ी से चली आ रही है।[1]

मथुरा का कोढ़िया घराना– मथुरा के श्री छेदराम कृत पोथी के अनुसार इस घराने का इतिहास लगभग 500 वर्ष पुराना है। मथुरा के श्री गोविन्दराम जी का अनुमान है कि यह पोथी 20वीं शती के पूर्वार्द्ध में लिखी गई होगी। ब्रजभाषा में लिखी इस पुस्तक की मूल प्रति उन्ही के पास सुरक्षित है। उसकी मूल बातें संक्षेप में इस प्रकार हैं–

सतयुग में बैन नामक एक राजा हुए। जो ऋषि मुनियों को अत्यधिक कष्ट देते थे। इस अधर्मी राजा को दण्ड देने के लिए देवताओं ने उसके प्राण हर लिए परन्तु राजा के बिना कौन रक्षक होगा।[2]

इस बात को ध्यान में रखकर देवताओं ने राजाबैन के दाहिने जांघ को मथा। मथने पर चार बालक प्रगट हुये। 1– कौल, 2–क्रन्ति, 3–हूण, 4–भील। यह चारों पैदा होते ही जंगल में चले गये। उसके पश्चात् राजा बैन की दूसरी जाँघ को मथा गया, जिससे भृगु राज पैदा हुए और उन्होने संसार का भार सौपा गया और वे जंगल

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 62, 63 प्रकाशक पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

2– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 40 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

में चले गये। कौल के वंश में श्री वाल्मीकि पैदा हुए जिन्होने रामायण की रचना की है।[1]

लगभग 500 पूर्व सम्प्रदाय के प्रणेता महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य का जन्म हुआ। बड़े होने पर उन्होने ब्रज की लीला प्रारम्भ की। भगवान की लीला के गुणगान के लिए उन्होने विविध साजों को कलाकारों में बाट दिया किन्तु मृदंग को अपने पास ही रखा। उन्होने सोचा कि यह साज अपने भक्त को जो गोवर्धन में गिरिराज की तलहटी में कोढ़ रोग से ग्रस्त पड़ा है दे। अता वहां जाकर उन्होने उस कोढ़िया को रोग मुक्त किया और उसे मृदंग सौपते हुए आशीर्वाद दिया। तू जाकर श्रीनाथ जी की सेवा में मृदंग बजा तेरे वंश में ऐसे कलाकार जन्म लेगे जिनकी कला बेजोड़ रहेगी। तब से कोढ़िया की वंश तथा शिष्य परम्परा में मृदंग की विद्या अनवरत् चली आ रही है। मथुरावासी श्री छेदाराम कृत पोथी में उस कोढ़िया के नाम का उल्लेख नही है परन्तु उसके दोनो पुत्रों केवल किशन एवं जटाधन के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है।[2]

केवल किशन ने देश–विदेश का भ्रमण किया था और उन्होने कुछ समय तक रीवा नरेश के यहाँ नौकरी भी की थी। केवल किशन के पुत्र हीरालाल तथा उनके दो पौत्र– दास और भवानीदास भी उच्चकोटि के मृदंगवादक थे। दास अपने पुत्र टीकाराम के जन्म के समय ही स्वर्ग सिधार गये थे और भवानीदास दतिया दरबार में नौकरी करने चले गये थे। दतिया जाकर अपने चाचा भवानीदास जी से टीकाराम ने शिक्षा लेनी प्रारम्भ की।[3]

टीकाराम के पुत्र जोधसिंह और कुदऊ सिंह के बीच दतिया दरबार में प्रतिस्पर्द्धा जग प्रसिद्ध है जिसमें काली के वरदान से कुदऊ सिंह ने तीन धा वाली विलक्षण चक्रदार परन से जोधसिंह को परास्त किया। कुदऊ सिंह ने मथुरा मध्यप्रदेश एवं बंबई के अनेक पुष्टिमार्गीय मंदिरों के कीर्तीनिदों के साथ पखावज संगत की।

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 63 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

2– छायानट अंक 66 जुलाई, सितम्बर 1993 राजा छत्रपति सिंह पृ0सं0 44 प्रकाशक उत्तर प्रदेश नाटक अकादमी।

3– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 41 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

बाबू जोधसिंह के तीन शिष्य हुए जिनके नाम थे नाना पान से, कुन्दन लाल एवं सूरदास। इसमें नाना पानसे ने अपनी प्रतिभा से अपना घराना बनाया आधुनिक युग में कुदऊ सिंह एवं नाना पानसे दो ही घराने व्याप्त हैं।[1]

कुदनलाल मथुरा निवासी थे और केवल किशन के भाई जयराम की वंश परम्परा में थे। रायपुर दरबार में भी रहे। कुंदन लाल के पुत्र गंगाराम तथा प्रशिष्य मक्खन लाल, मथुरा मन्नू जी (काशी) तथा अन्य शिष्यों ने भी बहुत नाम कमाया। चारूखेर राज्य से सम्बन्ध सूरदास के विषय में ज्यादा जानकारी प्राप्त नही है।[2]

केवल किशन के भाई जटाधन की वंश परम्परा मुख्य रूप से मथुरा में रही। आज की इस परम्परा के कुछ कलाकार ब्रज भूमि मथुरा तथा दिल्ली में है। केवल किशन जी के समान उनके भाई जटाधर भी अपने विद्वान पिता के योग्य पुत्र थे। उनके पुत्र छज्जू राम आज भी ब्रज के कला जगत में विख्यात है। छज्जूराम के पुत्र हरी राम थे। हरी राम के दो पुत्र घासी राम और तुलसी राम हुए। दोनों ही मृदंग वादन में निपुण थे। घासीराम के तीन पुत्र थे भोजराज, कुन्दनलाला और लक्ष्मण। भोजराम अपने परिवार में सबसे बडे थे अतः उन्होने अपने दोनों भाईयो के साथ ही अपने ताऊ के पुत्र मोहन, श्याम खोवाराम, चुहिया राम को मृदंग की शिक्षा दी।[3]

भोजराम के पुत्र कुन्नीराम और पौत्र टीकाराम (दूसरे) उत्कृष्ट वादक हुए। टीकाराम के दोनो पुत्र छेदाराम और सोनीराम तथा शिष्य पुन्ना ब्रजदासी, गंगाधर ब्रजदासी, भजनलाल बदलु तथा प्रीतमदास ने अत्यधिक यश प्राप्त किया था। इन सब में छेदाराम का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ब्रज के इतिहास को लिपिबद्ध करने का सराहनीय श्रेय उन्हीं को है उन्होने अपने पिता टीकाराम की सूचनानुसार गर्ग संहिता के आधार पर ब्रज के गोस्वामी श्री 108 श्री गोपाललाल जी आज्ञा से मृदंग का इतिहास तैयार किया था जो आज भी उनके भतीजे एवं शिष्य गोविन्दराम के पास सुरक्षित है।

1– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलग पृ0सं0 74 प्रकाशक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

2– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलग पृ0सं0 74 प्रकाशक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

3– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 65, 66 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

छेदाराम के पुत्र कन्हैयालाल पौत्र विष्णु प्रपौत्र दीपक तथा प्रमुख शिष्यो में भतीजे पं0 गोविन्दराम लाल जी, गोपाल जी गोलाराम आदि।[1]

घासीराम के पुत्र कुंदनलाल के दो पुत्र गंगाराम व बिहारी लाल उत्कृष्ट वादक थे। जमाई हीरालाल को इन्होने दहेज में ढोलक की शिक्षा दी। गंगाराम बडौदा दरबार में नासिर खां से मृदंग–वादन की प्रतियोगिता जीतकर बडौदा दरबार में लम्बे अर्से तक रहे।

निःसंतान गंगाराम ने अपने शिष्य मक्खन लाल बालया वाले मुंशी जी, मन्नू जी (वाराणसी) नन्नू छेदाराम किशोर राम तथा मंगलाराम के सिखाया। गंगाराम के भाई बिहारी लाल झाबुआ स्टेट के नौकर थे उन्होने गोविन्दराम, लाल जी, गोपाल जी तथा कन्हैयालाल जी को सिखाया।

घासीराम के तीसरे पुत्र को दतिया नरेश ने एक गांव पुरस्कृत किया। वे मंजई गांव वाले बूचाराम अर्थात बिहारी लाल थे उनके पुत्र मथुरा लाल ने भी उनसे सीखा।[2]

इस परम्परा के उत्तराधिकारी श्री गोविन्दराम अत्यन्त विद्वान कलाकार थे। उनके प्रमुख शिष्यों में उनके पुत्र प्रभुदयाल तथा लक्ष्मण जी, हरी गोपाल, लच्छी, फकीरचन्द्र, सोनपाल तथा अशोक जौहरी के नाम उल्लेखनीय हैं। यह जटाधर के प्रपौत्र काशीराम के वंश एवं शिष्य परम्परा में से थे।

तुलसीराम के चार पुत्र हुए मोहन जी, बोधराम, श्याम लाल तथा चुईयाराम। इन चारों की संगीत शिक्षा उनके चचेरे भाई भोजराम से हुई। मोहन जी के दो पुत्र हुए। 1. हेमा, 2. दुल्ली। तुलसी का एक पुत्र लोचन को उनके चाचा चिरंजी लाल द्वारा गोद लिया गया था। बोधाराम के पुत्र बुद्धाराम और पौत्र ने भी मृदंग की शिक्षा प्राप्त की। श्याम लाल के पुत्र चिरंजी लाल को कोई पुत्र नहीं थे। उन्होंने दुल्ली के पुत्र लोचन को गोद लिया था। लोचक का भी स्वर्गवास कम उम्र में हो गया था।

1– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 43, 44 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

2– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलग पृ0सं0 75 प्रकाशक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

उसके भाई चुईयाराम के पौत्र गोलाराम को बाद में गोद ले लिया था। चुईयाराम को दो बेटे नाथराम तथा मुक्काराम हुए। नाथ राम के ही बेटे गोलाराम को ही चिरंजी लाल ने गोद लिया था। गोलाराम के पुत्र प्रेम बल्लभ उर्फ खुनखुन ने आकाशवाणी के दिल्ली केन्द्र में वर्षो तक कार्य किया। उनके पुत्र का नाम भगवानदास है। मथुरा के ही इस प्राचीन परम्परा के वंशज एवं शिष्यों में आजकल पखावज की अपेक्षा तबले के प्रति अधिक से ध्यान देखने को मिलता है और मथुरा में पखावज की परम्परागत विद्या का भविष्य अधिक उज्जवल नहीं दिखता।[1]

पंजाब घराना

लाला भवानीदीन जिन्हे पंजाब घराने के कलाकार भवानीदास के नाम से सम्बोधित करते है पंजाब घराने के आदि प्रवर्तक माने जाते है। पोथी में भी पंजाब घराने की मृदंग परम्परा के संस्थापक का नाम भवानीदास बताया गया है। मध्य युग से ही पंजाब के अनेक हिन्दु एवं मुसलमान मृदंग वादक अपनी वादन निपुणता के कारण देश भर में प्रसिद्ध हो गये थे। पंजाब में आज भी कुछ गिने–चुने मृदंग वादक विद्यमान है जो भजन–कीर्तन के साथ ही ध्रुपद धमार गायकी के साथ भी संगत करते है।[2]

मद्नुल मौसी की भूमिका में मोहम्मद करम इमाम ने सुधीर सेन हयात तथा किरपा आदि पखावजियो के नाम गिनाये है। इनमें सुप्रसिद्ध पखावजी किरया राम मृदंगराय की उपाधि से विभूषित हुए।

आचार्य बृहस्पति लिखते है। बादशाह औरंगजेब ने खुशहाल खां गुण समन्दर खां तथा कृपाराम को मृदंगराय की उपाधि दी थी। इनके उपरान्त घासीराम पखावजी हुसेन खां तथा लाला भगवानदीन आदि पखावजियों का उल्लेख मिलता है। किरया राम की वंश परम्परा में इनके पुत्र जौहर सिंह एक उत्कृष्ट पखावजी हुए, जो जोधपुर

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 66, 67 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

2– पखावज की उत्पत्ति, विकास एवं वादन शैलियां डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 146 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

दरबार में रहे, किरया राम के प्रमुख शिष्यो में घासीराम और लाला कलाकार थे। घासीराम मुख्यता आजीवन दिल्ली में ही रहे जबकि लाला भवानीदीन अपनी अद्वितीय कला और शान के बल पर सम्पूर्ण देश में सुविष्यात हुये।[1]

कुदऊ सिंह तथा पंजाब इन दोनो परम्पराओं के मूल प्रवर्तक लाला भवानीदीन जी ही थें तथापि कुछ लोगों में यह धारणा व्याप्त है कि इन दोनो घरानों के प्रवर्तक दो अलग–अलग लोग रहे होगें। पंजाब घराने के कलाकार उस्ताद अल्लारखा खाँ साहब, लाला भवानीदीन को भवानीदास कहते है। इसके अनुसार ये नाम इन्होने अपने गुरू के मुख से सुनी थी तथा इन्हे ही अपने पंजाब घराने का आद्य पुरूष मानते है।[2]

20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मथुरा के सुप्रसिद्ध पखावजी पं0 छेदाराम के पूर्वोत्क ग्रंथानुसार लाला केवल किशन के पौत्र भवानी दास के द्वारा खब्बे हुसैन ढोलकिया को प्रतियोगिता में परास्त कर उनके पुत्र अमीर अली को अपना शिष्य बनाया जिसने भवानीदास द्वारा आविष्कृत दुक्कड़ बाज का प्रचार किया और अनेक शिष्य बनाये। ताज खां डेरेदार के पुत्र नासिर खां पखावजी को भवानीदास के प्रशिष्य जानकीदास ने शिक्षा दी थी। जानकीदास एवं भवानीदास के भतीजे टीकाराम के शिष्य थे। कालान्तर में नासिर खां बडौदा में नियुक्त हो गये अतएव आज का पंजाब घराना 18वीं शती के मध्यकाल से प्रारम्भ हुआ। इस घराने में पहले पखावज शिक्षा दी जाती थी बाद में फकीर बख्श के समय मे लगभग तबला प्रारम्भ हुआ।[3]

पखावज की परम्परा में भवानी दास के प्रमुख पाँच शिष्यों के नाम उल्लेखनीय हैं।

उस्ताद कादिर बख्श (प्रथम) उनके पुत्र मियां हुसैन बख्श पौत्र मियां फकीर बख्श तथा प्रपौत्र कादिर बख्श थें।

1– छायानट अंक 66 जुलाई, सितम्बर 1993 राजा छत्रपति सिंह पृ0सं0 40 प्रकाशक उत्तर प्रदेश नाटक अकादमी।

2– पखावज की उत्पत्ति, विकास एवं वादन शैलियां डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 147 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

3– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलग पृ0सं0 77 प्रकाशक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

दूसरे उस्ताद ताज खाँ डेरेदार उनके पुत्र नासिर खां मथुरा के पं0 जानकीदास के शिष्य थे उस्ताद नासिर खां ने जियाजी राव गायकवाड के राजकाल में बडौदा दरबार में रहकर कलावन्त कारखाने में रहकर पं0 कान्ताप्रसाद आदि अनेक शिष्य तैयार किये। उनकी वंश परम्परा में उनके पुत्र नासिर हुसैन पौत्र नजीर खां आदि उत्कृष्ट कलाकार थे।

तीसरे एक अज्ञात शिष्य थें जिनके शिष्य पं0 भवानी प्रसाद से ब्रज के मक्खन लाल ने शिक्षा ग्रहण की थी।

चौथे शिष्य उस्ताद हदू खां लाहौर वाले थे जिनके शिष्य पं0 बलदेव सहाय बनारस वाले ने सीखा ऐसा मत मतान्तर है।

पांचवे शिष्य अमीर बख्श थे जो खब्बे हुसैन ढोलकिया कि पुत्र थे। भवानी दास ने खब्बे हुसैन को हरा कर उसके पुत्र को अपना शिष्य बनाया तथा अमीर अली ने पंजाब के दुक्कड़ बाज का प्रारम्भ किया।

लालादीन ने प्रशिष्य उस्ताद हुसैन बख्श के पुत्र उस्ताद फकीर बख्श के सैकड़ो शिष्य थे। उनमें प्रमुख उनके पुत्र कादिर बख्श मियां करम इलाही, बाबा मलंग खां उस्ताद फिरोज खां, उस्ताद कल्लन खां, उस्ताद मीरा बख्श घीलवालिया, उस्ताद महबूब बख्श आदि के नाम गिनाये जाते है।[1]

1– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलग पृ0सं0 77 प्रकाषक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

पंजाब घराने की वंष परम्परा

संस्थापक लाल भवानीदास

↓

इनके शिष्यों की परम्परा

1720 से 1750 के बीच

↓

हद्दु खाँ, मियाँ कादिर बख्श 1, हिन्दु शिष्य, अमीर अली,

ताज खाँ डेरेदार, लाहौर वाले

हद्दु खाँ लाहौर वाले के शिष्यों की परम्परा

↓

शिष्यों की परम्परा विशेषरूप से पाकिस्तान में फैली

मियाँ कादिर बख्श प्रथम के शिष्यों की परम्परा

↓

मियाँ हुसैन बख्श (पुत्र)

↓

फकीर बख्श (पुत्र)

↓

कादिर बख्श (पुत्र)

↓

हिन्दु षिष्य नाम अज्ञात

↓

भवानी प्रसाद

↓

माखन लाल मथुरा 1876–1951

1– पखावज के उत्पत्ति एवं वादन शैलियॉ डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 149 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

कुदऊ सिंह घराना

संगीत जगत में महाराज कुदऊ सिंह का नाम सदैव आदर, सम्मान के साथ लिया जाता है। कुदऊ सिंह ने अपनी प्रतिभा, तेजस्वी योगदान से पखावज के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। आप महान लाला भवानी दीन के शिष्यों में एक थे। ''लाला भवानी दीन के विषय में संगीत जगत में काफी मत–मतान्तर है। एक मतानुसार वे अकबरयुगीन लाला भगवान दास पखावजी की वंश एवं शिष्य परम्परा में से थे। कहा जाता है कि उनके परदादा लाला भगवान दास ब्रज के श्याम जी पखावजी के चार प्रतिभावन शिष्यों में से एक थे, जिन्हे अकबर के दिल्ली दरबार में तानसेन की संगति करने का अवसर मिला था।''[1] ''शहनशाह अकबर ने भगवान दास के पुत्रों को सिंह की उपाधि दी थी तब से उनके वंश के सभी कलाकार अपने नाम के साथ सिंह लगाने लगे। कुदऊ सिंह के गुरू भवानी दीन इसी भगवान दास की परम्परा के शिष्य अथवा वंशज थे। इसलिये तो लाला भवानी दीन को बहुत से विद्वान लाला भवानी सिंह के नाम से जानते है।''[2]

तभी से उनके वंशज अपने नाम के साथ सिंह लगाने लगे। आप का जन्म बाँदा (उत्तर प्रदेश) में सन् 1812 ई0 में तथा मृत्यु 1907 में हुई थीं। ''उनका पूरा नाम कुदऊ सिंह तिवारी भी कहा गया।''[3]

कुदऊ सिंह पखावज के युग निर्माता थे। ''मृदंग वादन की शास्त्रीय परम्परा को उन्होने स्वनिर्मित परणो से विकसित किया था। ''उन्होने हजारो परणो की रचना की उनकी बाज बहेरी परण, गज परण, शिव ताण्डव परण, समुद्री परण, दहेज परण, अश्व परण, मनमोर परण, बिजली परण, घटातोप परण, दुर्गा परण, गणेश परण आदि विशेष रूप से प्रसिद्ध है ऐसा कहा जाता है कि जब वे जल पंच देवी स्तुति परण देवी के सामने बजाते थे, तब रखा हुआ नारियल स्वतः टूट जाता था''[4]

1– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 51 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

2– वही

3– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलग पृ0सं0 78 प्रकाशक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

4– पखावज की उत्पत्ति, विकास एवं वादन शैलियां डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 151 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

कुदऊ सिंह माँ काली के परम भक्त थें उनके चमत्कारपूर्ण वादन को लेकर कई कथाएं प्रचलित है जैसे– हाथी के सामने गज परन बजाकर उसे वश में करना इत्यादि। कुदऊ सिंह ने अपने जीवनकाल में कई राज–दरबारों में पखावज वादन प्रस्तुत किया दतिया (मध्य प्रदेश) नरेश भवानीसिंह के दरबार के अमूल्य रत्न थे। राजा भवानी सिंह ने इस महान पखावज वादन को सिंह की उपाधि प्रदान की थी।'' सन् 1847 में अवध के नवाब वाजिदअली शाह के दरबारों में असाधारण मृदंग वादन प्रस्तुत करके कुँवर दास की उपधि प्राप्त की थी। सन् 1848 में लखनऊ दरबार में ज्योति सिंह पखावजी को परास्त करके एवं हजार स्वर्ण मुद्रा का पुरस्कार जीता था। रीवां के दरबारी कलाकार मुहम्मद शाह के पराजित किया। एक विशेष परण के लिये रींवा नरेव ने प्रसन्न होकर सवा लाख रूपये इनाम में दिये थें। वह परण सवा लाखी परण के नाम से प्रसिद्ध है।''[1]

''उनकी विशाल शिष्य परम्परा सम्पूर्ण भारत में फैली हैं। उनके प्रमुख शिष्यो में निम्नलिखित व्यक्तियों के नाम उल्लेखनीय हैं– पं0 मदन मोहन उपाध्याय, अयोध्या के बाबा रामकुमार दास, दरभंगा के पं0 भइया लाल कुदऊ सिंह के अपने भाई राम प्रसाद, राजस्थान के श्री जगन्नाथ पारीक, बंगाल के श्री दिलीप चन्द्र भट्टाचार्य, पीलीभीत के शम्भू दयाल, बनारस के बडे पर्वत सिंह (कोई उन्हे चर्खारी के तो कोई उन्हे दतिया के निवासी बतलाते हैं) टीकामगढ़ के लाला ज्ञानी हरनाम सिंह तथा रागी फुम्मन सिंह, महाराष्ट्र के बलवन्ता राव ताने, मथुरा के चिरंजी लाल (तबला वादक श्री प्रेम बल्लभ के दादा) सिंध हैदराबाद के चेतन गिरि, पं0 मदन मोहन सोरोवाले बदलू तथा चेतरा (दोनों भाई) भतीजे श्री जानकी प्रसाद इत्यादि। उनकी दो बेटियॉ थी, उनके नाम जमाई काशी प्रसाद ने भी उनसे सीखा था। (काशी प्रसाद को कोई दोहित्र मानते है) महाराज कुदऊ सिंह के नाती (पुत्री + काशी प्रसाद का पुत्र) का नाम शंभु प्रसाद तिवारी था। शंभु प्रसाद अपने समय के बहुत ही गुणी एवं विद्वान पखावजी माने जाते थे। वे बांदा के निवासी थी। उन्हे केवल एक पुत्री थी।

1– छायानट अंक 66 जुलाई, सितम्बर 1993 राजा छत्रपति सिंह पृ0सं0 45 प्रकाशक उत्तर प्रदेश नाटक अकादमी।

जिसका ब्याह उन्होने अपने प्रतिभाशाली शिष्य रामदास शर्मा मृदंगाचार्य से कर दिया था।[1]

इस प्रकार कुदऊ सिंह के अनेको शिष्य हुये जो सम्पूर्ण भारत में उनकी शिक्षा का प्रचार प्रसार किया।

''कुदऊ सिंह के छोटे भाई पं0 राम प्रसाद की परम्परा में भी उनकी विद्या फैली। राम प्रसाद जी स्वयं उत्कृष्ठ पखावजी थे जिन्हे अपने पिता ईश्वर प्रसाद एवं बडे भाई पं0 कुदऊ सिंह महाराज की विद्या विरासत में मिली थीं। उनके पुत्र गया प्रसाद भी उच्च कोटि के कलाकार हुये, वे दतिया दरबार में रहे। कहा जाता है कि भतीजे गया प्रसाद को कुदऊ सिंह ने स्वयं तालीम दी थी। गया प्रसाद के पुत्र अयोध्या प्रसाद अपनी परम्परा के समर्थ कलाकार हुये। ये राष्ट्रीय पुरस्कार पद्मश्री सम्मान से अलंकृत किये गये।[2]

कुदऊ सिंह महाराज के सैकड़ो प्रशिष्य हुए जिन मे देवकी नन्दर पाठक, मुन्शी भृगुनाथ लाल वर्मा, स्वामी रामदास, बाबा ठाकुरदास, मन्नू जी मृदंगाचार्य, राम मोहिनी शरण, मख्खन लाल मिटू खाँ, रहेमत खाँ, अनंत बुवा साधले बापू साहेब शालीग्राम, भगवानदास, स्वामी राम शंकर दास पागलदास, शंकर राव शिंदे अपेगाँवकर, उध्धवराव, शिंदे अपेगाँवकर ठाकुर जगदीश सिंह, दीन ठाकुर भीखम सिंह, बलीराम पन्त पाण्डे, कोलबाजी पिपलखरे इत्यादि प्रमुख है। इन विद्वान कलाकारों के भी सैकड़ो शिष्य आज इस परम्परा को आगे बढ़ा रहे है।[3]

1– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 57 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

2– पखावज की उत्पत्ति, विकास एवं वादन शैलियां डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 151, 152 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

3– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 58 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

कुदऊ सिंह घराना

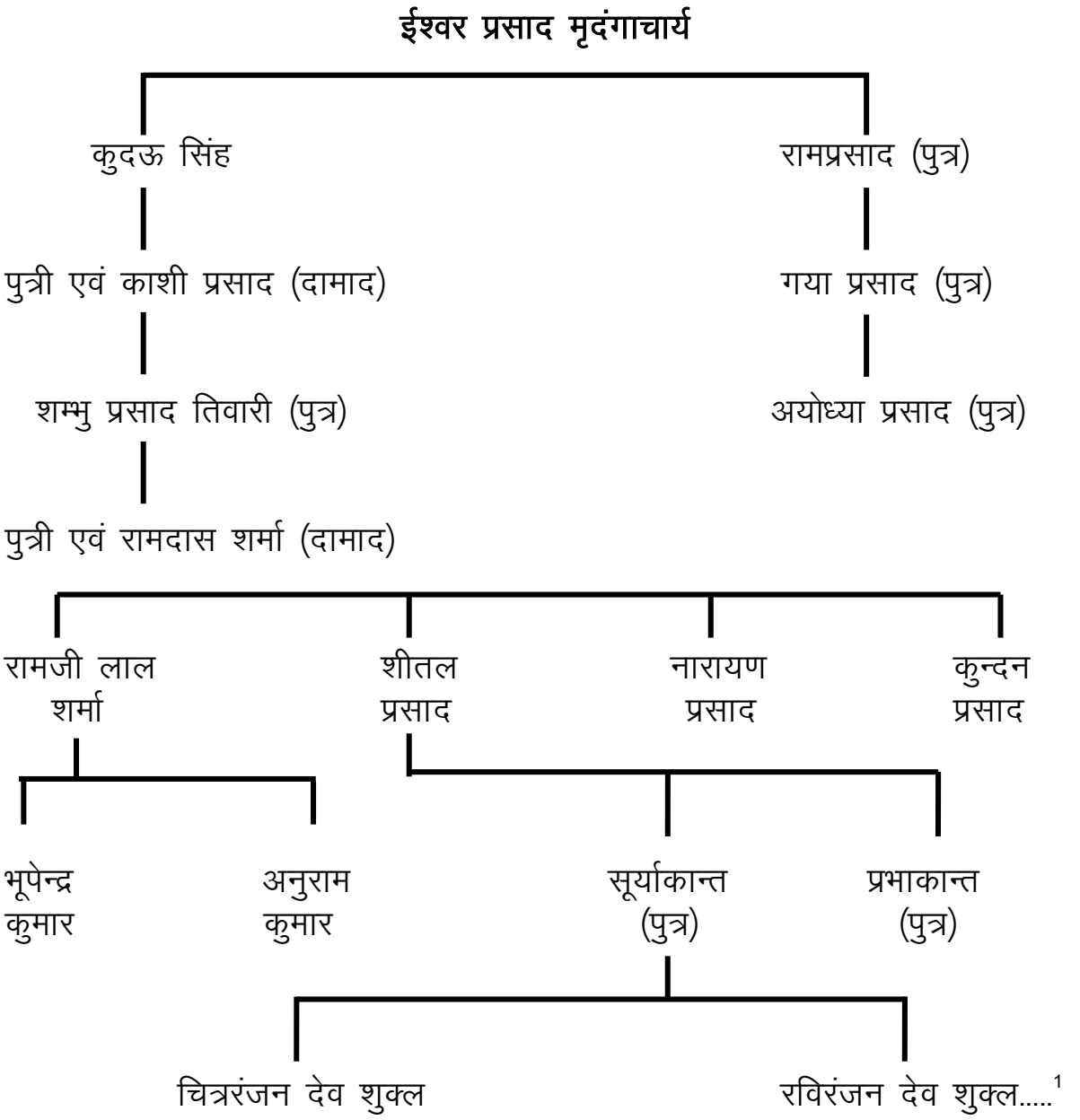

1– पखावज और तबला के घराने एवं परम्परायें डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0– 61 प्रकाशक के0की0 एस0 जिजिना, मुम्बई

नाना पानसे घराना

अलौकिक प्रतिभा सम्पन्य महाराष्ट्र के नाना पानसे अपने नाम नाना पानसे घराने के प्रवर्तक थें। आपके विषय में विद्वान लिखते है कि आप अत्यन्त विनम्र, सरल विचारो के व्यक्ति थे। आप किसी कलाकार का अनादर नही करते थें। सभी का उचित सम्मान करते थें, ऐसा आप का व्यक्तित्व था। विशाल शिष्यों का समूह इस घराने की विशेषता है।

आप ''महाराज कुदऊ सिंह के समकालीन बाबू जोधसिंह के शिष्य थे। बाबू जोधसिंह के गुरू के शिष्य में भी दो मत है– पहले मत के अनुसार वल लाला भवानीदीन के शिष्य एवं कुदऊ सिंह के गुरू भाई थे। दूसरे मतानुसार, उनका सम्बन्ध लाला केवल किशन की परम्परा से है। पं0 छेदराम कृत पोथी में जोधसिंह को भवानीदीन का पौत्र तथा टीकाराम का पुत्र बताया गया है।[1]

पोथी में ऐसा वर्णन मिलता है कि कुदऊ सिंह और जोधसिंह में संगीत प्रतियोगिता सात दिनो तक हुई जिसमें कुदऊ सिंह के अद्वितीय चक्करदार तीन धा वाली परन का निर्माण किया जिसमें बाबू जोधसिंह पराजित हुए बाद में जोधसिंह काशी में माँ भगवती के चरणों में अपनी संगीत साधना करने लगे।

''नाना का जन्म महाराष्ट्र के वाई के पास बावधन में हुआ था। बाल्यावस्था में ही पिता से पखावज सीख कर मन्दिरो में भजन के साथ सुन्दर संगत किया करते थे। पिता के उपरान्त नाना को पुडे के दरबारी कलाकार मन्याबा जी कोडीतकर, वाई के चौण्डे बुआ एवं मार्तण्ड बुआ से सीखने का मौका मिला। बाद में ये बाबू जोधसिंह के पास काशी चले गयें।[2]

नाना के गुरूओं में प्रयाग के माधव स्वामी का भी उल्लेख मिलता है। आबान मिस्त्री की पुस्तक में श्री गोविन्दराव बुरहानपुरकर की पुस्तक भारतीय ताल मंजरी का उल्लेख किया है। बाबू जोधसिंह जी ने उनके प्रयाग के परम सन्त योगीराज माधव

1– छायानट अंक 66 जुलाई, सितम्बर 1993 राजा छत्रपति सिंह पृ0सं0 47 प्रकाशक उत्तर प्रदेश नाटक अकादमी।

2– पखावज की उत्पत्ति, विकास एवं वादन शैलियां डॉ0 अजय कुमार पृ0सं0 153 प्रकाशक कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

स्वामी के पास भेज दिया था। योगी राज माधव स्वामी उच्च कोटि के मृदंगाचार्य थें। उनके शिष्यत्व में नाना बारह वर्ष रहे। अन्त में शिक्षण पूर्ण करने के बाद माधव स्वामी ने नाना पानसे को अपनी कीमती पुस्तक, अपना मृदंग तथा आशीर्वाद देकर स्वं जल समाधि ले ली। गुरू की जल समाधि के बाद नान प्रयाग में नही रूके। वहाँ से वे इन्दौर आये और उन्हे इन्दौर के राज दरबार में आश्रय प्राप्त हुआ।[1]

नान पानसे इन्दौर नरेश तुकोजी राव होल्कर के अत्यन्त प्रिय पखावज वादक थें। वास्तव में पखावज का प्रचार–प्रसार में नाना पानसे का योगदान अत्यन्त है। मत यह भी प्राप्त होता है कि उनके पाँच सौ शिष्य थे। मराठी भाषा में पाँच सौ को पानसे कहा जाता है। अतः वे पानसे कहलाये।[2]

''उत्तर भारत के बाद महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश तथा दक्षिण भारत में पखावज का जो प्रचार–प्रसार हुआ है उसके पीछे उनका तथा उनकी शिष्य परम्परा का बड़ा योगदान रहा हैं। उनकी विशाल शिष्य परम्परा में उनके पुत्र बलवन्त राव पानसे, नाती शंकर भैया पानसे, पं0 सखाराम आगले, पं0 शंकर राव अलकुटकर सहित महाराजा भऊ साहब, पं0 गोविन्दराम राजवैध तथा पं0 बलवन्त राव वाटरे आदि के नाम मुख्य है। उनके प्रशिष्यों में पं0 अम्बादास पंत आगले, पं0 गोविन्दराम बुरहानपुरकर, पं0 गुरूदेव पटवर्धन, पं0 बाबूराव गोखले, राजवैध–बन्धु चन्द्रकांत, वीरेन्द्र कुमार, केशवराव तथा शिवनारायण, पं0 सखाराम मृदंगाचार्य, पं0 बलिराम पंत पाण्डेय, नारायण रावकारी, शंकर भैया, चुन्नीलाल पवार, रंगनाथ राव देगलूरकर मातेग बुआ एवं आधुनिक पीढ़ी में श्रीकृष्णदास बनातवाला (बुरहानपुर) कोलाबाजी विपलधर, अर्जुन सेजवाल, विनायक राव घाघरेकर गोस्वामी, कल्याण राय, गोकुल उत्सव महाराज तथा देवकीनन्दर महाराज नाथद्वारा इत्यादि के नाम उल्लेखनीय है।[3]

1– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 64 प्रकाशक पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

2– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 64 प्रकाशक पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

3– छायानट अंक 66 जुलाई, सितम्बर 1993 राजा छत्रपति सिंह पृ0सं0 47 प्रकाशक उत्तर प्रदेश नाटक अकादमी।

ऐसा भी उल्लेख मिलता है। कि ''नाना पानसे जी तबला वादन तथा कत्थक नृत्य में भी सिद्ध हस्त थे। पखावज के साथ–साथ तबले में अनेक बंदिशो की रचना की तथा शिष्य बनायें।

अवधी घराना

अवधी घराना कुदऊ सिंह घराने की ही एक शाखा है। मृदंग सम्राट कुदऊ सिंह से शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात् उनके दो प्रमुख शिष्य पं0 मदन मोहन उपाध्याय और बाबा राम कुमार दास सन् 1930 ई0 के आस–पास अयोध्या चले गये। वहाँ उन्होंने पखावज का खूब प्रचार किया तथा अनेक शिष्य तैयार किये। पं0 मदन मोहन उपाध्याय ने अयोध्या में स्वामी रामदास नाम ने अपने एक प्रतिभावन शिष्य को मृदंग सिखा कर उन्हें अयोध्या में उसका प्रचार का भार सौंपा। तत्पश्चात् वे अयोध्या छोड़कर बंगाल की ओर चले गये। किन्तु बाबा रामकुमार दास सदा के लिये अयोध्या में ही रह गये। वहाँ रहकर उन्होंने अपनी परम्परागत पखावज विद्या का यथेष्ट प्रचार किया, अनेक शिष्य तैयार किये तथा 'अवधी' घराने की नीवं डाली।[1]

अवधी घराने के कलाकार अपने घराने के मूल पुरूष के रूप में मृदंग सम्राट कुदऊ सिंह जी की प्रतिष्ठा को ही मानते हैं। यद्यपि बाबा रामकुमार दास ने अवधी घराने की अप्रत्यक्ष कल्पना की थी लेकिन उसे साकार करने का महत्वपूर्ण कार्य मृदंग महर्षि स्वामी भगवान दास ने किया जो बाबा राम कुमार दास और स्वामी रामदास की शिष्य परम्परा में आते हैं। उन्हीं के प्रयत्नों के फलस्वरूप इस परम्परा में पखावज और तबला के सैकड़ो शिष्य तैयार हुए। जिन्होंने अवधी घराने का नाम रोशन किया।[2] अवधी घराने के प्रमुख कलाकरों में बाबा ठाकुर दास, राममोहिनी शरण, स्वामी भगवान दास, रामध्यान दास, जानकी रसिक शरण, गोविन्द दास, मणिक दास, रामानुज दास, जानकी रसिक शरण, गोविन्द दास, माणिक दास, रामानुज दास, बलदेव दास

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 78 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

2– वही

किशोर शरण, गोपाल दास पहलवान, रामलखन दास, रामशंकर दास पागल दास, सरयूदास, स्वामी तत्वोधानन्द अवध बिहारीदास, गोपाल दास महन्त महावीर प्रसाद, रामहरख दास इत्यादि के नाम उल्लेखनीय है।[1] अवधी घराने में स्वामी रामशंकर दास उर्फ पागल दास का नाम उल्लेखनीय है।

वे अयोध्या में हनुमत विश्व कला संगीत आश्रम चलाते हैं जहाँ उन्होंने अपनी अवधि परम्परानुसार अनेक शिष्य तैयार किये हैं जिनमें राम किशोर दास, राज खुशी राम, दामोदर शर्मा, राज कुमार झा, जयकृष्ण मायती, सुव्रतो विश्वास, रूप किशोर दास, संतोष दास, कौशल किशोर द्विवेदी, संजय आगले, विजयराम दास, अजय राम दास (टुनटुन) राम टहल दास, जगदम्बा पाण्डेय, चन्द्र मोहन, कल्याण कुमार, कुशल कुमार, कौशल कुमार, लाल जी, राघवेन्द्र शरण, भक्त राज भोंसेले अभिमन्यु मूले, गुलाम अली, वाहिदअली, वंशीलाल, देवेन्द्र सक्सेना, इन्द्र देव झा, तथा विदेशी शिष्यों में जोन डेविड कर्मोड, तोद नॉर्दन, माइकल फ्राईइलेण्ड, रिजर्ड होर्न, लीन रीटनर आदि प्रमुख है।[2]

नाथद्वारा में पखावज वादन की परम्परा

जयपुर अथवा नाथद्वारा में प्रचलित पखावज वादन प्रणाली का महत्वपूर्ण स्थान है। यह प्रणाली प्राचीनकाल से चली आ रही है जो कि आधुनिक काल तक परम्परागत रूप से मौजूद है। यहां की वंश परम्परा का इतिहास कुछ निम्न प्रकार है।

राजस्थान के केकटखेड़ा ग्राम में कुछ उपद्रव विद्रोह होने से अव्यवस्था उत्पन्न हुई जिससे कुद लोग उस स्थान को छोड़कर जंगलों की ओर चले गयें। इनमें नाथ द्वारा परम्परा से सम्बन्धित तीन व्यक्तियों का नाम विशेष रूप से आता है, जो कि तीन भाई थे :

श्री तुलसीदास जी, श्री नरसिंह दास जी और श्री हालू जी। ये तीनों भाई जंगलों में भ्रमण करते रहे तथा भक्ति में लीन हो गये। जिससे यह कहा गया कि

1– पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें डॉ0 आबान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 60 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

2– वही

भक्ति मार्ग से इन्हें एक शक्ति प्राप्त हुई, वह शक्ति थी संगीत की। इस तरह वह संगीत की ओर नत हो गये। दो भाई श्री तुलसीदास जी व श्री नरसिंह दास जी भक्ति करते विलीन हो गये तीसने भाई श्री हालू जी से ही वंश चला। वह लौटकर आमेर आये और वहीं उन्होने निवास किया।

श्री हालू जी के दो पुत्र हुए श्री स्वामी जी, और श्री छबील दास जी। दूसरे लड़के श्री छबील दास जी वंश आगे बढ़ा।

इस वंश परम्परा का निम्न रूप है –

1. श्री हालू जी
2. श्री छबीलदास जी
3. श्री फकीर दास जी
4. श्री चन्द्रभान जी
5. श्री मान जी
6. श्री रूप राग जी
7. श्री बल्लभ दास जी।

जैसा विदित है उस युग में संगीतज्ञों को राजाओं के यहां आश्रय मिलता था और राजाश्रय ही आजीविका का माध्यम था। जयपुर के महाराजा जयसिंह ने, जिनके नाम पर सन् 1669 में जयपुर बसाया गया, श्री रूपराम जी को राजाश्रय दिया।

सन् 1735 में श्री रूपराम जी जयपुर से जोधपुर नरेश सिंह जी की प्रेरणा से जोधपुर आये। श्री अजय सिंह जी को संगीत से बहुत प्रेम था और कई संगीतज्ञों के उन्होंने राज्यश्रय दिया था। यहीं पर श्री रूपराम जी ने भी अपनी वाद्य विद्या का चमत्कार दिलाया जिससे उन्हें कई भेंट व उपहार प्रदान किये गये। श्री रूपराम जी एक कुशल पखावजी थे जो तांडवनृत्य की परनें विशेष कुशलता से बजाते थे।[1]

1– मृदंग वादन (नाथद्वारा परम्परा) पुरूषोत्तम दास जी पृ0सं0 1 प्रकाशक संगीत नाटक अकादमी।

संवत् 1859 (सम्भवता सन् 1803 ई0) में वयोवृद्ध पं0 रूपराम तथा उनके पुत्र बल्लभदास नाथद्वारा के बड़े गिरधारी जी महाराज की आज्ञा से नाथद्वारा आकर ठाकुर जी की सेवा में लग गये। तब से आज तक उनके घराने की परम्परा नाथद्वारा की मृदंग परम्परा के नाम से देश भर में प्रसिद्ध है उन दिनों जोधपुर दरबार मे अकबर कालीन लाला भवानीदास की परम्परा के उत्तराधिकारी उत्कृष्ट पखावज वादक पहाड़ सिंह भी दरबारी कलाकार के पद पर विद्यमान थें। यद्यपि पं0 रूपराम तथा पहाड़ सिंह समकक्ष थे तथापि वह अपने कलाकार मित्र पहाड़ सिंह की कला के बड़े प्रशंसक थे और उनका बड़ा आदर–सम्मान करते थे यही कारण है पं0 रूपराम के पुत्र बल्लभदास की शिक्षा–दीक्षा विशेष रूप से पहाड़ सिंह के पास सम्पन्न हुयी। बल्लभदास का जम्न संवत् 1826 में जोधपुर में हुआ था। बल्लभदास के तीन पुत्र हुये– चतुर्भुज शंकरलाल एवं खेमलाल। चतुर्भुज जी उदयपुर में रहते थे। शंकरलाल खेमलाल का जन्म क्रमशा संवत् 1886 और 1889 में नाथद्वारा में हुआ था। दोनो भाई मृदंग वादन में अत्यन्त प्रवीण थे तथा मात्राओं के भेद और तालों के विषय में गहरी जानकारी रखते थे। संवत् 1906 में बल्लभ दास का निधन हो गया। उस समय तक उन्होने इन दोनों पुत्रों को इस विद्या में पारंगत कर दिया था।[1]

संवत् 1911 में जामनगर के गो0 श्री ब्रजनाथ जी महाराज, गो0 श्री द्वारकेशनाथ जी महाराज तथा सौराष्ट्र के पं0 आदित्यराम जी के सानिध्य में आज्ञा से नाथद्वारा आये। शंकरलाल, खेमलाल एवं आदित्य राम के तालविषयक शास्त्र–संवादों के आधार पर 'मृदंग सागर' लिखी। इस पुस्तक में बड़ी तालो के चक्र, मात्राभेद, कुछ खुद की रचनायें आदि संग्रहित हैं। इस पुस्तक में भी उन्हे श्याम लाल जी से काफी सहयोग मिला। खेमलाल के दूसरे पुत्र का नाम रघुनाथ था व श्याम लाल के पुत्र का नाम विट्ठल था। घनश्यामदास जी की शिक्षा अपने पिता शंकर लाल जी एवं चाला खेमलाल से हुई संवत् 1950 में शंकरलाल जी के देहावसन के कारण घनश्याम दास पिता के स्थान पर श्रीनाथ की सेवा में लग गये। ईश्वर के दरबार में नित्य लीलाओं में भगवान और भक्तों के साथ राज–दरबारों में भी धन–यश एवं कीर्ति अर्जित की।

1– छायानट अंक 66 जुलाई, सितम्बर 1993 राजा छत्रपति सिंह पृ0सं0 43, 44 प्रकाशक उत्तर प्रदेश नाटक अकादमी।

चाचा खेमलाल जी की अधूरी पुस्तक 'मृदंग सागर' को घनश्याम दास ने पूरी की। 20वीं सदी प्रारम्भ में इसका प्रकाशन रहा। इसमें अनेक चक्रदार परनें व रेले लिखे गये। पं0 पुरूषोत्तम दास जी घनश्याम दास जी की परंपरा के अंतिम वंशज कलाकार थे। जिन्हें पद्म श्री उपाधि सहित देश के उत्कृष्ट पखावज–वादकों में स्थान प्राप्त हुआ।[1]

अपने पूर्वजों के कदम पर चल कर अपने पिता के स्थान पर नाथद्वारा के मन्दिर में वे वर्षो तक सेवा में रहे। तत्पश्चात् दिल्ली के भारतीय कला केन्द्र में आ गये और बाद में दिल्ली के ही 'कथक केन्द्र' में गुरू के पद पर प्रतिष्ठित हो कर रहे। उन्होंने अपना शेष जीवन नाथद्वारा में व्यतीत किया और वहीं उनका देहान्त हुआ। उनको कोई पुत्र नहीं था। उनके प्रमुख शिष्यों में उनके नाती प्रकाशचन्द्र, दोनों भानजे रामकृष्ण एवं श्यामलाल (नाथद्वारा), तेज प्रकाश तुलसी, दुर्गालाल कथक, महाराज छत्रपतिसिंह (बिजना), रामलखन यादव, भागवत उपरेती, हरिकृष्ण बहेरा, तोताराम शर्मा, मुरलीधर गुरव, गौरांग चौधरी, भीमसेन, मदन लाल आदि कलाकारों के नाम उल्लेखनीय हैं।[2]

नाथद्वारा वंश परम्परा

श्री वल्लभ दास जी

श्री चर्तुभुज जी	श्री शंकर जी	श्री खेम जी
	↓	↓
	श्री घनश्याम जी	श्री श्यामलाल जी
	(जन्म सन् 1871)	↓
	↓	श्री रघुनाथ जी
	श्री पुरूषोत्तम दास जी	↓
	(जन्म सन् 1907)	श्री विठ्ठल जी
		श्री दयाला व नारायण

1– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलंग पृ0सं0 82 प्रकाशक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

2– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 71 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

नाथद्वारा की रणछोड़दास की वंश–परम्परा :– श्री रणछोड़ दास की चौथी पीढ़ी के प्रपौत्र मूलचन्द्र जी नाथद्वारा निवासी रहे हैं। उनके अनुसार उनके प्रपितामाह रणछोड़दास जी वृन्दावन वासी थे, वहां से नाथद्वारा आकर श्रीनाथ जी की सेवा में रत रहे। मृदंग के अतिरिक्त सितार–वादन में भी दक्ष थे। उनके पुत्र देव किशन जी पिता से ही सीखकर उत्कृष्ट कलाकार सिद्ध हुए। वे आजीवन ठाकुर जी की सेवा में रहे। देव किशन जी के पिता श्री ब्रजलाल वर्मा कीर्तन के साथ पखावज एवं वीणा में भी दक्ष थे और नाथद्वारा एवं कांकरोली में तानसेन के नाम से प्रसिद्ध थे इनके दूसरे पुत्र परमानन्द भी सितार, बीन, मृदंग में सम्मान निपुणता के साथ श्री नाथजी की सेवा में रहे, उनके चार पुत्रों में दो वादक हैं, जो नाथद्वारा में रह रहे– एक पुत्र स्व0 रतन लाल भीलवाड़ा में चले गये थे एवं घड़ीसाज़ थे। आकाशवाणी जयपुर में भी पं0 लक्ष्मणभट्ट तैलंग के साथ पखावज–संगत हेतु आते थे व मूलचंद जी श्री नाथ सेवा में वृद्धावस्था में भी सेवारत रहे। इन्होंने मंदिर द्वारा संचालित नाथद्वारा के सभी विद्यालयों पखावज–तबला शिक्षा दी।

परंपरा – वंषवृक्ष

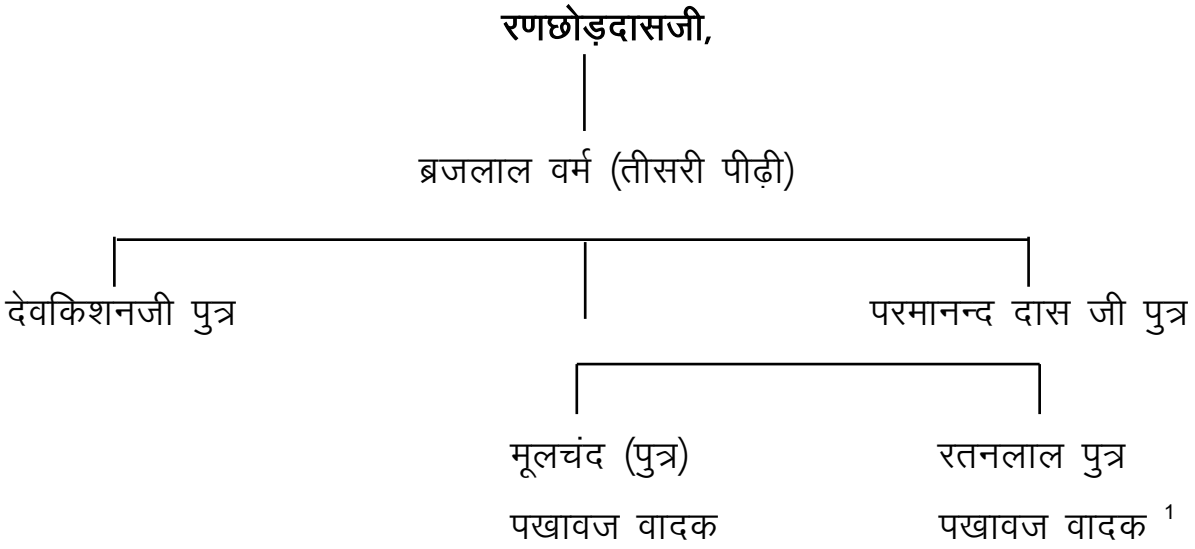

1– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलंग पृ0सं0 85 प्रकाशक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

नाथद्वारा में विट्ठलदास जी के मंदिर के मठधीशों की वंश परम्परा में कला के संस्कार तथा गायन–वादन की शास्त्रीय शिक्षा चली आ रही हैं। श्री बल्लभ सम्प्रदायाचार्य पीठाधीश्वर गोस्वामी जी श्री गोविन्द दास जी महाराज को पखावज तथा सितार का अच्छा ज्ञान था। उनके पुत्र गोस्वामी जी देवकी नन्दन जी महाराज पखावज के अच्छे ज्ञाता थे। उनके पुत्र गोस्वामी जी गिरधर लाल जी महाराज जी ने भी अपने पिता के संगीत संस्कार एवं ज्ञान गरिमा को वंश परम्परागत प्राप्त किया था। आज नाथद्वारा में गोस्वामी श्री गिरधर लाल जी महाराज के पुत्र गोस्वामी श्री कल्याण राय जी महाराज गद्दी पर विराजमान हैं। उनके दो छोटे भाई गोस्वामी श्री गोकुलोत्सा जी महाराज तथा गोस्वामी देवकी नन्दन जी महाराज सहित तीनों भाई पखावज वादन के अत्यन्त निपुण कलाकार हैं। छोटी उम्र में ही इन तीनों प्रतिभाशाली कलाकार महाराजों ने पं0 दीननाथ कीर्तनकार श्री चुन्नीलाल लालपवार, शिवनारायण, गोविन्द भाऊ राजवैद्य (इन्दौर) तथा श्रीकृष्णदास बनातवाल (बुरहानपुर) से शिक्षा प्राप्त करके अपने वंश परम्परा के संगीत को उज्जवल किया है। वे पानसे घराने के शिष्य हैं। और उसी घराने का बाज भी बजाते हैं। पखावज के अतिरिक्त वे ध्रुपद, ख्याल गायकी का भी ज्ञान रखते हैं। साथ में उन्होंने अपनी बन्दिशों को लिपिबद्ध करके पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया है।[1]

रायगढ़ की मृदंग परम्परा

मध्य प्रदेश की रायगढ़ रियासत का संगीत प्रेम सुविख्यात है। वहां के गुणग्राहक नरेशों ने वर्षोपर्यन्त संगीत एवं उसके कलाकारों को आश्रय दिया था। रायगढ़ में संगीत की नींव डालने वाले महाराज मदन सिंह की छठी पीढ़ी ने राजा घनश्याम सिंह के समय से गणेशोत्सव के अवसर पर संगीत–सम्मेलन हुआ करता था। उनके पुत्र भूपेन्द्र सिंह भी संगीत रसिक थे तथा समय–समय पर संगीत सम्मेलन आयोजित किया करते थे। किन्तु भूपेन्द्र सिंह के दूसरे पुत्र महाराजा चक्रधर

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 83 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

सिंह का राज्यकाल (सन् 1923–1947 ई0) रायगढ़ में संगीत का स्वर्णकाल कहलाता है। महाराजा चक्रधार गुणग्राही शास्त्रज्ञ, संगीतज्ञ व रचनाकार थे। वह स्वयं मृदंग, तबला, सितार तथा कथक नृत्य में प्रवीण थे। लखनऊ में आयोजित संगीत–सम्मेलन में उन्हें 'संगीत सम्राट' की उपाधि से विभूषित किया गया था। उनके भाई नटवर सिंह जी भी पखावज वादन में प्रवीण थे।[1]

महाराज चक्रधर सिंह के दरबार में ठाकुर लक्ष्मण सिंह नामक एक विद्वान् पखावज वादन थें उनका विशष्यत्व ग्रहण करके महाराज ने इस विद्वान कलाकार का यथेष्ट सम्मान किया था। ठाकुर लक्ष्मण सिंह जी, चक्रधर सिंह महाराज के पिता भूपदेव सिंह के काल से ही राज कलाकार थे।

ठाकुर लक्ष्मण सिंह ने रायगढ़ के मठाधीश एवं कुदऊ सिंह परम्परा के संगीताचार्य महन्त श्री गोपालदास से पखावज एवं तबला वादन की शिक्षा प्राप्त की थी। वे गायन, घटवाद्यम, जलतरंग तथा सितार वादन में भी कुशल थे। उन्होंने प्रचलित–अप्रचलित तालों की विशद जानकारी प्राप्त थी। महाराज चक्रधर सिंह के ग्रन्थ निर्माण कार्य में उनका योगदान अमूल्य था।[2]

स्व0 ठाकुर लक्ष्मण सिंह की संगीत–परम्परा का सूत्रपात वृन्दावन के बाबा गोपाल दास से हुआ। बाबा गोपाल दास जी रायगढ़ की पुरानी बस्ती में स्थित स्व0 रामचरण सिंह गौतमक मंदिर के महन्त नियुक्त हुए थे। इस मंदिर का निर्माण ठाकुर लक्ष्मण सिंह के पिता स्व0 ठा0 रामचरण सिंह गौतम, दरोगा ने किया था। बाबा गोपाल दास गायन के अतिरिक्त तबला, पखावज तथा सितार बजाने में सिद्धहस्त थे। इन्होंने बड़ी रूचि के साथ ठा0 लक्ष्मण सिंह को संगीत का श्रेष्ठ ज्ञान देकर निष्णात बनाया जिसके कारण ठाकुर साहब पूर्व में स्व0 राजा भूपदेव सिंह, तत्पश्चात् स्व0 राजा नटवर सिंह व राजा चक्रधर सिंह के दरबारी संगीतज्ञ के रूप में रहे।[3]

1– छायानट अंक 66 जुलाई, सितम्बर 1993 राजा छत्रपति सिंह पृ0सं0 41 प्रकाशक उत्तर प्रदेश नाटक अकादमी।

2– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्ती पृ0सं0 71 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

3– पखावज पारिजात ठाकुर भीखम सिंह गौतम पृ0सं0 69 प्रकाशक मुद्रक संगीत प्रेस साउथ मलाका इलाहाबाद।

इन्होंने महाराज के अतिरिक्त अनेक विद्यार्थियों को निःशुल्क शिक्षा दी थी जिनमें उने भतीजे ठाकुर भीमख सिंह 'मृदंग प्रभाकर', डॉ0 हरि सिंह तथा भांजे ठाकुर जगदीश सिंह 'मृदगार्जुन' के नाम से विशेष उल्लेखनीय है। ठाकुर जगदीश सिंह 'दीन' रायगढ़ दरबार में सम्मानीय कलाकार थे। उन्होंने अपने मामा के अतिरिक्त अयोध्या के बाबा ठाकुर दास और बांदा के शम्भू महाराज से भी मृदंग की शिक्षा ली थी। आजकल रायगढ़ में उनके पुत्र ठाकुर वेदमणि सिंह उनकी कला के उत्तराधिकारी हैं तथा उनके पिता द्वारा स्थापित 'ठाकुर लक्ष्मण सिंह संगीत विद्यालय' का संचालन करते हुये अपने कुल की परम्परा को निभा रहे है।[1]

आजकल यह संगीत विद्यालय एक महाविद्यालय के रूप में चल रहा है, जिसका संचालन स्व0 ठा0 जगदीश सिंह के ज्येष्ठ पु0 ठा0 वेदमणि सिंह कर रहे हैं।

ठा0 भीखम सिंह ने दिलीप गबेल एवं प्रभाकर सिंह को मृदंग की शिक्षा इस परम्परा को आगे बढ़ाया है। ठा0 वेदमणि सिंह के शिष्यों में से ठा0 महेन्द्र प्रताप सिंह, जगदीश मेहर, केशव आनंद शर्मा, सुरेश दुबे, मनहरण सिंह ठाकुर, निमाई चरण पंडा, राजेन्द्र विश्वकर्मा, श्रीमती अलका जावकर, राधेलाल गजमिये तथा प्रवीण सिंह एवं ओंकार सिंह आदि वर्तमान समय में इस परम्परा को अग्रसर कर रहे हैं। ठा0 महेन्द्र सिंह के पुत्र रमेश सिंह भी तबला वादन में अपना विशिष्ट स्थान बनाने में तत्पर है। स्व0 बड़कू मियां के शिष्यों में से बसंतराव आठले, नीलांबर मेहर, नाथूराम गुप्ता आदि हुए हैं। इस परम्परा के अन्य मेघावी विद्यार्थियो में से श्री अजांबर बहिदार, चिंतामणि पुजारी, आदिराम कुम्भकार, गोपीनाथ पाण्डेय, अविनाश आठले, मायाराम चौहान, ऊषा अग्रवाल, पुष्पलता वर्मा, ए0 राधा, कु0 अर्चना मिश्र, हरि शंकर पाण्डेय मोहनलाल प्रधान के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।[2]

1– छायानट अंक 66 जुलाई, सितम्बर 1993 राजा छत्रपति सिंह पृ0सं0 42 प्रकाशक उत्तर प्रदेश नाटक अकादमी।

2– पखावज पारिजात ठाकुर भीखम सिंह गौतम पृ0सं0 70 प्रकाशक मुद्रक संगीत प्रेस साउथ मलाका इलाहाबाद।

रियासत रायगढ़ की परम्परा

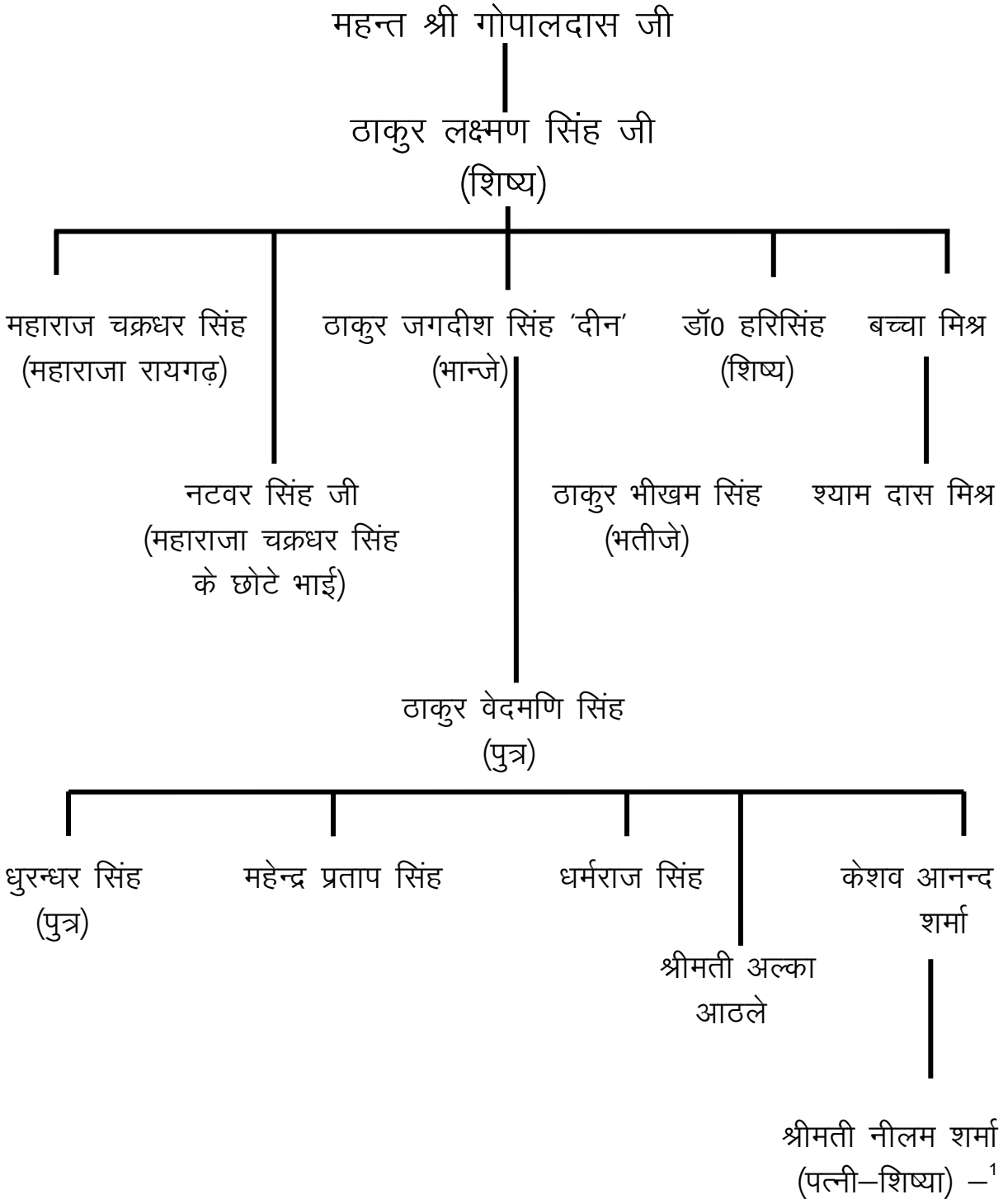

1– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्ती पृ0सं0 99 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस0 जिजिना मुम्बई।

महाराज चक्रधर सिंह ने अपने दरबार के आश्रिय विद्वान ने कलाकारों की सहायता से स्वयं संगीत के पाँच अमूल्य ग्रन्थ की रचना की थी जो अपने आप में अनूठे हैं। इन हस्तलिखित विशालकाय ग्रन्थों में रागो पर आधारित रागरत्न मंजूषा नृत्य पर आधारित नर्तन सर्वस्व तथा लय ताल पर आधारित ''ताल तोय निधि'' ''ताल बल पुष्पकार एवं मुरज परन पुष्पाकर प्रमुख हैं। इन सभी ग्रन्थो में ताल तोय निधि लय ताल के विषय का एक महत्वपूर्ण एवं आधारभूत ग्रन्थ है। जिसका वजन 32 किलोग्राम है। वह करीब दो हजार संस्कृत श्लोकों में लिखा गया है।'' यह करीब दो हजार संस्कृत श्लोकों में लिखा गया है।'' ''भरत नाट्य शास्त्र'' संगीत रत्नकार तथा संगीत कलाधर पर आधारित इस विशालकाय हस्तलिखित गन्थ में दो से लेकर तीन सौ अस्सी मात्र तक तालो का तालचक्र सहित विशद वर्णन है।[1]

ग्वालियर परम्परा

ग्वालियर परम्परा का पखावज का ग्वालियर–परम्परा का आद्य संस्थापक जोरावर सिंह माने गये, जो कि कुदऊ सिंह के समयकालीन एवं मित्र थे। कुछ विद्वानों का मत है कि वे लाल भवानी दीन के शिष्य थे किन्तु इसके प्रमाण नहीं हैं। जोरावर सिंह ग्वालियर के महाराज जानकीजी राव के आश्रित कलाकार थे। उनसे सम्मान मिलने के कारण वे ग्वालियर में बस गये, इस कारण यह परम्परा ग्वालियर घराने के नाम से जानी गई। जिसमें चार–पांच पीढ़ियों में पखावज–वादन की परम्परा प्रमुखतः पुष्टिमार्गीय मंदिरों में एवं साथ में ही मंचो पर आसीन रही।[2]

जोरावर सिंह ने अपने पुत्र सुखदेव सिंह जी को अच्छी से अच्छी शिक्षा प्रदान की। पिता के समान पुत्र भी ग्वालियर दरबार के कलाकार थे। श्री सुखदेव जी के पुत्र एवं देश के सुप्रसिद्ध पखावज वादक श्री पर्वत सिंह अपने पिता से भी अधिक उत्कृष्ट कलाकार बने। बाल्यावस्था से ही अपने पिता से शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात्

1– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्ती पृ0सं0 98 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

2– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलंग पृ0सं0 86 प्रकाशक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

उन्होने ग्वालियर घरान के दरबारी कलाकार के रूप में स्थान ग्रहण किया। उस्ताद अल्लादिया खाँ, पं0 विष्णु दिगम्बर, सितार वादक उस्ताद बरकत उल्ला खाँ, उ0 नदीरखाँ, पं0 भास्कर बुआ बखले आदि अनेक उच्चकोटि के कलाकारों के साथ ही पर्वत सिंह को संगत करने का अवसर मिला। वे पन्द्रह वर्षो तक बम्बई में रहे। उस्ताद हाफिज अली खाँ, पं0 कृष्णराव शंकर पंडित, उस्ताद उमाराव खाँ आदि कलाकारों से उनकी आत्मीयता बढ़ी। उन दिनों हाफिज अली खाँ (सरोद) और पर्वत सिंह (पखावजी) को जोड़ी सारे देश में प्रसिद्ध थी। पर्वत सिंह के छोटे भाई कन्हैया भी अच्छे पखावज वादकों में से थे।[1]

श्री जोरावर सिंह के प्रमुख शिष्यों में ग्वालियर निवासी श्री नारायण प्रसाद दीक्षित अग्निहोत्री का नाम भी अग्रगण्य है, जिनकी शिष्य–परम्परा ग्वालियर और महाराष्ट्र में भी परिलक्षित होती है। उनके वंश में उनके पुत्र वेकटराव दीक्षित, पौत्र शंकरराव दीक्षित, शिष्यों में गणपतराव गुरव (पर्वत सिंह भी उनसे मार्गदर्शन लेते थे) को सिखाया। माधवराव ने बाल कृष्ण पाटकर को शिखा दी।[2]

पर्वत सिंह के शिष्यों में उनके तीनों बेटे माधो सिंह, विजय सिंह एवं गोपाल सिंह के उपरान्त उनके दामाद जमुना प्रसाद तथा रामदास पाठक के नाम उल्लेखनीय हैं। राम दास पाठक ने कानपुर के तेज बहादुर सिंह से बेला सीखा था। इसके उपरान्त श्री रामाराव काटे का नाम भी इसी परम्परा से सम्बन्धित है।

श्री माधो सिंह ने हीरा लाल त्रिपाठी तथा ग्वालियर की एक दूसरी तबला परम्परा के वंशज श्री नारायण प्रसाद रतौनिया को भी सिखाया।[3]

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 84, 85 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

2– हिन्दुस्तानी संगीत के पखावज वादन को वल्लभ सम्प्रदाय की देन डॉ0 मधु भट्ट तैलंग पृ0सं0 86, 87 प्रकाशक राजस्थान संगीत नाटक अकादमी।

3– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराएं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 85 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।

स्व0 जोरावर सिंह

(जनकोजी एवं जयाजीराव महाराज के राज्यकाल में दरबार वादक)

स्व0 सुखदेव सिंह (मृत्यु 1910)

(जयाजीराम तथा माधवराव महाराज के राज्यकाल में दरबार – वादक)

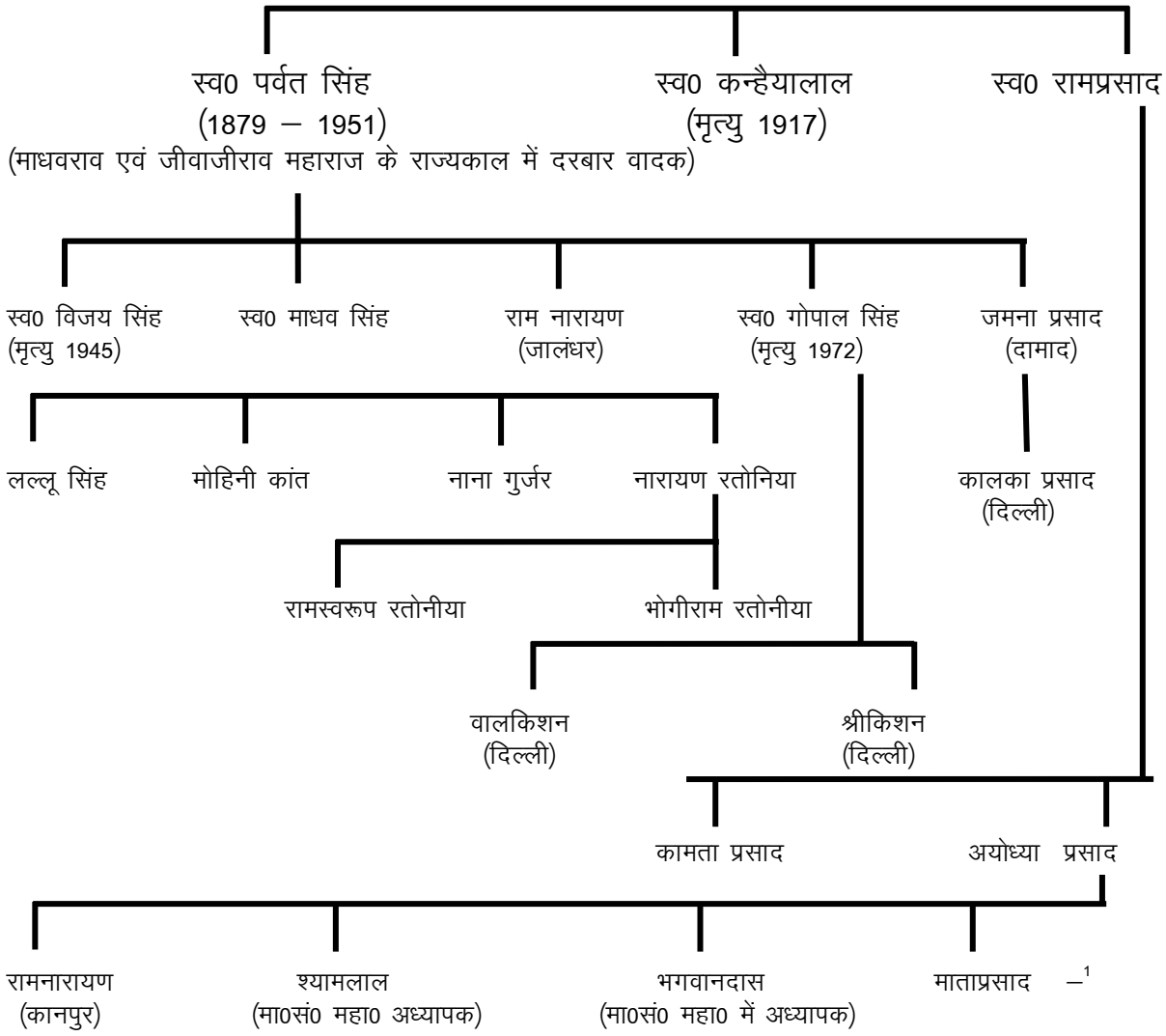

1– ग्वालियर की संगीत परम्परा डॉ0 अरूण बागरे पृ0सं0 परिशिष्ट–4 प्रकाशक यशोधरा प्रकाशन हुबली, कर्नाटक

महाराष्ट्र की गुरव परम्परा एवं मंगलवेढेकर घराना

मुगल एवं मुस्लिम काल से यह देखा गया कि भारतीय संगीत के देवालयो में आश्रय मिला था। महाराष्ट्र भी भक्तिमय संगीत का केन्द्र रहा है। जिन विद्वानों, कलाकारों तथा भक्तो में ताल वादन विशेषकर पखावज वादन तथा भक्ति संगीत को कठिन परिस्थितियों में संवाद कर रखा उन्हे गुरव कहते थे। आज भी महाराष्ट्र में गुरव परिवारों में भक्ति संगीत की वंश देखने को मिलती है।[1]

हमें पखावज के विविध घरानों का क्रमबद्ध इतिहास सत्रहवीं शताब्दी के अंत से तथा अठारवीं शताब्दी के आरम्भ काल से प्राप्त होता है। यद्यपि अकबर के युग के पखावज वादकों की कुछ जानकारी उपलब्ध हो सकी है और वह भी क्रमबद्ध इतिहास के रूप में नहीं। उसी प्रकार ब्रज की परम्परा भी बहुत प्राचीन है तथा जयपुर घराने के कुछ कलाकारों का इतिहास तो तीन सौ वर्ष से अधिक पुराना लगता है। गुरव परम्परा तो सदियों पुरानी है, किन्तु इनमें से किसी भी परम्परा का क्रमबद्ध विकास प्राप्त नहीं होता।[2]

इस परम्परा में आदि पुरूष और इसके विकास एवं वंश–परम्परा के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त नहीं होती है। तथापि कुछ–कुछ गुणी लोगों एवं कलाकारों की जानकारी प्राप्त हुई है जो इस प्रकार है–

1. नाना साहब पेशवा के दरबार में श्री धर्मा गुरव मृदंग वादक का उल्लेख है जो गुणी तथा कलाकार के रूप में प्रसिद्ध थें
2. बाजीराव पेशवा (द्वितीय) के दरबार में नागू गुरव तथा देवीदास का उल्लेख मिलता है।

1– ताल वाद्य शास्त्र मनोहर भालचन्द्र राव मराठे पृ0सं0 139, 140 प्रकाशक शर्मा पुस्तक सदन, ग्वालियर।

2– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्ती पृ0सं0 85 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना स्वर साधना समिति मुम्बई।

3. पूना के मन्याबा कोतड़ीकर, नाना पानसे के बाल्यकाल के गुरू थे।

4. वाई गांव के मार्तण्ड एवं चौड़े बुआ गुरब पखावजी थे।[1]

5. इन्दौर के सुप्रसिद्ध मृदंगाचार्य पंडित सखाराम पन्त आगले तथा उनके सुपुत्र पं0 अम्बादास पन्त आगले जाति के गुरव थे। पं0 सखाराम पन्त ने पखावज की शिक्षा का आरम्भ अपने पिताजी से ही किया था बाद में उन्होने इन्दौर के नाना पानसे जी से सीखा।

6. पूना के पार्वती देवस्थान के ज्ञानबा राजूरीकर।

7. मिरज के रामभाऊ गुरव।

8. पूना के मृदंगाचार्य शंकर भैया घोरपड़कर। इन लोगों के नाम गुरव परम्परा में प्रमुखता से लिये जाते है।[2]

नाना पानसे जी के दोहित्र पं0 शंकर भैया पानसे के शिष्य पं0 सखाराम मृदंगाचार्य भी गुरव सम्प्रदाय से सम्बन्धित थे। यद्यपि उनकी शिक्षा–दीक्षा इन्दौर में हुई तथापि उनकी कर्मभूमि लखनऊ रही। उनके पुत्र सदाशीव तथा पौत्र विनायक राव भी उनकी परम्परा में विशेष योग्यता रखते है।[3]

मंगलबेढ़ेकर घराना

मंगलबेढ़ेकर घराने के प्रथम पुरूष पण्डित विट्ठलाचार्य जोशी मंगलवेढ़ा ग्राम के मन्दिर में गुरव (पुजारी) थे। इनका समय 18वीं सदी का अंत तथा 19वीं सदी का पूर्वार्द्ध रहा। विट्ठलाचार्य स्वयं अच्छे गायक, कीर्तनकार, वैदिनक कर्मकांडी ब्रह्मण, ज्योतिषी तथा मृदंगाचार्य थे। इन्होंने अपने सीमित भजन कीर्तन तक ही पखावज

1– ताल वाद्य शास्त्र मनोहर भालचन्द्र राव मराठे पृ0सं0 140 प्रकाशक शर्मा पुस्तक सदन, ग्वालियर।

2– ताल वाद्य शास्त्र मनोहर भालचन्द्र राव मराठे पृ0सं0 140 प्रकाशक शर्मा पुस्तक सदन, ग्वालियर।

3– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 86 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

वादन को विकसित किया। इन्होंने अपने बुद्धि कौशल से एक नवीन शैली का निर्माण किया जो आज मंगलबेढ़ेकर घराने के नाम से प्रसिद्ध है। मंगलबेढ़ेकर (जोशी) घराने में उनके पुत्र जनार्दन जोशी तथा प्रपौत्र क्रमशः पं0 काशीनाथ बुआ (गायनाचार्य) तथा केशव बुआ (मृदंगाचार्य) प्रमुख थे। केशव बुआ ने देशाटन कर नवीन–नवीन लोगों से ज्ञान प्राप्त किया, बोलों की रचना की तथा मुक्त हृदय से विद्यादान किया। केशव बुआ के पुत्र पं0 नारायणराव जोशी मंगलबेढ़ेकर अपने समय के धुरंधर पण्डित एवं वादनाचार्य रहे। परम्परागत वादन शैली में संशोधन कर नवीन बन्दिशों की रचना की, ये रचनाएँ सरल होती हैं।[1]

मंगलवेढ़ेकर घराने का विकास पं0 नारायण राव के समय में हुआ। नारायण राव जी ने गायन एवं पखावज की शिक्षा अपने पिता श्री केशव बुवा तथा चाचा श्री काशीनाथ बुवा से प्राप्त की थी। कहा जाता है कि वे अपने समय के धुरन्धर पंडित एवं उच्चकोटि के वादनाचार्य थे। उनकी मृत्यु 13 जून सन् 1980 को वयोवृद्ध अवस्था में हुई। देश भर में भ्रमण करके उन्होंने अपनी कला का प्रदर्शन किया था। अपने परम्परागत पखावज वादन में संशोधन करके उन्होंने सैकड़ों बन्दिशों की रचना की थी। क्लिष्ट लयों को सहज रूप से स्पष्ट, मधुर और तैयारी के साथ प्रकट करना और लय ताल में अपने साथ श्रोताओं को भी खींच ले जाना उनकी विशेषता थी। वे जितने गुणी थे उतने ही संत प्रकृति के व्यक्ति थे।[2]

मंगलवेढेकर घराने के कुछ प्रमुख शिष्यों में सर्वश्री परशुराम बुवा, गुरव, बालशास्त्री जोशी, दामुअण्ण कानेरकर, शंकरराव जंगम, भाऊसाहब राजवाड़े, जगन्नाथ बुवा पंढरपुरकर रंगनाथ बुआ देगलुरकर, देशापाण्डे, बैरिस्टर बाला साहेब खाजगीवाले, बापुराव गुरव, शिवराम बोधनकर शान्ता आप्टे, जगन्नाथ दलवीं, नारायण जोशी, बाजीराव सोनवणे, हरिभाऊ जेजूरीकर आदि के नाम लिए जा सकते हैं।[3]

1– ताल वाद्य शास्त्र मनोहर भालचन्द्र राव मराठे पृ0सं0 140 प्रकाशक शर्मा पुस्तक सदन, ग्वालियर।

2– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 90 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

3– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 91 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

पखावज की बंगाल परम्परा

बंगाल के संगीत शास्त्र में पखावज के घराने को मुख्य तीन परम्पराओं में बांटा गया था–

1. ब्रज परम्परा के लाला केवल किशन द्वारा स्थापित परम्परा।
2. विष्णुपुर घराने की परम्परा।
3. ढाका की परम्परा

लाला केशव किशन की पखावज परम्परा– श्री राम चन्द्र बोराल के अनुसार बंगाल में पखावज की मुख्य परम्परा लाला केवल किशन जी द्वारा स्थापित रही। देश के अनेक विद्वान तथा बंगाल के विद्वान इस मत से पूर्ण रूप से पोषक हैं। ब्रज–मथुरा के निवासी केवल किशन जी **''कोढ़िया''** घराने के प्रमुख कलाकार थे। वे देश भर में घूमते रहे और लखनऊ तथा बंगाल में लम्बी अवधि तक रहे। कुछ लोग उन्हें लाला भवानीदीन का भाई बताते हैं, किन्तु ब्रज की हस्तलिखित **''पोथी''** में कोढ़िया परम्परा के प्रतिनिधि कलाकार छेदाराम जी ने केवल किशन जी को लाला भवानीदीन का दादा तथा गुरू माना है। बंगाल में उनसे सीखकर जो परम्परा फैली वह बंगाल के पखावज घराने के नाम से प्रसिद्ध हुई। लाला केवल किशन जी से तीन प्रतिभाशाली शिष्यों – श्री निगाई, रामचन्द्र तथा निताई ने पखावज की शिक्षा प्राप्त की। इन तीनों भाइयों के दीर्घ परिश्रम के कारण ही बंगाल में पखावज की परम्परागत कला का प्रचार हुआ। उनके पश्चात् उनके घराने में बड़े समर्थ एवं विद्वान पखावजी पैदा हुए। जिन्होंने इस परम्परा को और भी समृद्ध एवं विस्तृत किया।[1]

श्री मुरारी मोहन गुप्त अपने समय के एक नामी पखावजी हो गये हैं। उन्होंने सर्वश्री रामचन्द्र चक्रवर्ती एवं निमाई चक्रवर्ती से शिक्षा प्राप्त की। श्री गुप्त ने न केवल एक कलाकार के रूप में ख्याति अर्जित की, वरन् अनेक शिष्य तैयार करके बंगाल में इस कला का यथेष्ठ प्रचार भी किया। श्री मुरारी मोहन के प्रमुख शिष्यों में सर्वश्री

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराऐं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 100, 101 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद।

दुर्लभ चन्द्र भट्टाचार्य (दुली बाबू–आपने कुदऊ सिंह से भी सीखा था), केशव चन्द्र मित्र (आपने श्री रामचन्द्र चक्रवर्ती से भी सीखा था), केशव चन्द्र मुखर्जी, प्रमथ गुप्त, देवेन्द्र गुप्ता, देवेन्द्र नाथ दे (सुबोध बाबू), जगदिन्द्र नाथ राय (महाराजा नाटोर), नरेन्द्र नाथ दत्त (स्वामी विवेकानन्द), वीरेन्द्र किशोर राय चौधरी (नाटोर राज के वंशज), सत्य शरण गुप्ता, सतीश चन्द्र दत्त, लालचन्द्र बोराल आदि प्रमुख माने जाते हैं। ऐसा कहा जाता है कि पं0 दुर्लभ भट्टाचार्य ने एक बार अपने घर पर एक संगीत समारोह का आयोजन किया। उसमें पखावज बजाते समय ही उनके प्राण निकल गये थे।

इस घराने के शिष्य प्रशिष्यों में श्री केशव चन्द्र मित्र के शिष्य श्री दीना नाथ हजारा तथा पं0 दुर्लभ चन्द्र भट्टचार्य के शिष्य श्री प्रताप चन्द मित्र का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। तदुपरान्त सर्व श्री नगेन्द्र नाथ मुखोपध्याय, अरूण प्रकाश अधिकारी (केवल बाबू), राजिब लोचन दे, भूपेन्द्र कृष्ण दे, रतन लाल भड, शम्भू मुकर्जी तथा शिवदास अधिकारी भी इस घराने के योग्य उत्तराधिकारियों के रूप में प्रसिद्ध हुये।[1]

बंगाल की पखावज परम्परा और खब्बे हुसेन ढोलकिया

बंगाल की पखावज परम्परा पर खब्बे हुसेन ढोलकिया का काफी प्रभाव रहा। ऐसा बहुत से लोगों का मत है। अतः यहाँ पर उनके विषय में चर्चा कर लेना योग्य होगा।

एक किंवदन्ती, जिसका प्रमाण छेदा राम कृत 'पोथी' में उपलब्ध है, के अनुसार लाला भवानीदास ने एक संगीत प्रतियोगिता में खब्बे हुसेन ढोलकिया को परास्त किया था। शर्त के अनुसार खब्बे हुसेन (ख्वाब हुसेन) की उँगलियाँ काट दी गई। अपमानित होकर खब्बे हुसेन बंगाल चले गये और उन्होंने पखावज के स्थान पर ढोलक को अपना लिया। आपने इस वाद्य पर एक नवीन वादन शैली का निर्माण करके ऐसा बेमिसाल ढोलक वादन किया कि संगीत जगत में उनका नाम 'खब्बे हुसेन ढोलकिया' के नाम से प्रसिद्ध हो गया। कहते हैं कि स्वयं भवानी दीन जी उनका

1– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 77 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

हृदय से आदर करते थे और गुणीजनों के समक्ष उनकी विद्या की प्रशंसा किया करते थे। बंगाल में ढोलक और खोल के प्रचार में भी खब्बे हुसेन का उल्लेखनीय योगदान रहा। खेद है कि उनके बंगाली शिष्यों की परम्परा का लिखित इतिहास उपलब्ध नहीं है। उनके पुत्र अमीर अली भवानी दास के शिष्य हुयें। उनकी कर्म–भूमि मुख्यतः पंजाब रही। उनकी वंश एवं शिष्य परम्परा के विषय में भी हम अंधकार में है।[1]

विष्णुपुर की पखावज परम्परा

श्री बेचा राम चट्टोपाध्याय की परम्परा में तबला तथा पखावज दोनों का प्रचार हुआ, उनके मुख्य शिष्यों में उनके भतीजे गिरीश चन्द्र चट्टोपाध्याय का नाम प्रमुख है। गिरीश चन्द्र के पुत्र नारायण चट्टोपाध्याय तथा उनके शिष्यों में सर्व श्री भैरव चक्रवर्ती, ईश्वर चन्द्र सरकार, निताई तंतु बाई, जगेन्द्र नाथ राय (नाटोर), हरि पदा करमकार आदि के नाम उल्लेखनीय है। श्री ईश्वर चन्द्र सरकार अपने समय के बहुत प्रसिद्ध कलाकार थे। श्री बेचा राम चट्टोपाध्याय के प्रशिष्यों में श्री विजन चन्द्र हजारे और श्री स्थिति राम पांजा मुख्य हैं। विष्णुपुर की इसी पीढ़ी के पश्चात् कोई इतिहास प्राप्त नही है।[2]

दूसरी परम्परा– विष्णुपुर घराने के पखावज–तबला की दूसरी परम्परा श्री राम प्रसन्न बन्द्योपाध्याय फैली है। उन्हें दोनों वाद्यों पर समान अधिकार प्राप्त था। श्री वन्द्योपाध्याय ने पखावज की तालीम विष्णुपुर घराने के किसी कलाकार से एवं तबले की शिक्षा लखनऊ घराने के उस्ताद मम्मन खाँ से ली थी।

1– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 78 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

2– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराऐं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 102, 103 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद।

श्री राम प्रसन्न वन्द्योपाध्याय का शिष्य परिवार काफी बड़ा था, उसमें सर्वश्री खुदीराम दत्त, विजन चन्द्र हजारे, नकुल चन्द्र नन्दी, नित्यानन्द गोस्वामी, पशुपति नाथ सखा तथा बृज लाल माँझी प्रमुख हैं। इनके प्रशिष्यों में सर्व श्री अजीत हजारे, मनोज दे, बाँके बिहारी दत्त, सुबोध नन्दी, शिव प्रसाद गोस्वामी, विपिन बिहारी दास (विपिन बाबू) सत्तार अली, कालिपद चक्रवर्ती, भाल चन्द्र परमणिक, विश्वनाथ कर्मकार तथा सुप्रसिद्ध श्री ज्ञान प्रकाश घोष (विपिन बाबू से पखावज की शिक्षा प्राप्त की थी) आदि मुख्य हैं।[1]

ढाका की परम्परा

ढाका में पखावज के प्रचार एवं उसकी परम्परा की स्थापना में स्थानीय बासक परिवार का विशेष योगदान रहा है। श्री रामकुमार बासक ढाका की पखावज परम्परा के आदि पुरूष थे। उनके पुत्र उपेन्द्र कुमार बासक तथा परिवार के सदस्य और मोहन बासक इन परम्परा के अग्रणी कलाकार थे। पखावज वादन में गौड़ मोहन बासक का तो विशेष स्थान था। वे उच्चकोटि के कलाकार एवं योग्य गुरू थे। उनके शिष्यों में उनके वंशज शशीमोहन बासक तथा आनन्द मोहन बासक ने काफी ख्याति प्राप्त की थी। शशि मोहन बासक पखावज के साथ–साथ तबले के भी अच्छे कलाकार थे और ढाका के सुप्पन खाँ के शिष्य थे। ढाका के मुख्य कलाकार श्री प्रसन्न कुमार साहा वाणिज्य गौर मोहन बासक के शिष्य थे। बासक परिवार के सदस्यों में श्री पाणिन्द्र कुमार बासक तथा श्री सतीश चन्द्र बासक व शिष्यों में सर्व श्री गगन चौधरी भगवत साहा तथा गौड़ा के नाम प्रसिद्ध है।[2]

1– पखावज एवं तबला के घराने एवं परम्पराये डॉ0 आवान ई0 मिस्त्री पृ0सं0 79 प्रकाशक के पं0 के0की0 एस. जिजिना मुम्बई।

2– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराऐं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 103 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद।

वैष्णव परम्परा

बंगाल के श्री केशव देव एक कुशल पखावजी के साथ–साथ वैष्णव परम्परा के अनुयायी थे। वृन्दावन में बंगाली वर्ष 1889 में उनके घर पर एक पुत्र रत्न का जन्म हुआ, जो कि बाद में नवद्वीप चन्द्र बृजवासी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वे अपने समय के अत्यन्त प्रसिद्ध खोल वादक, कीर्तनकार एवं पखावज वादक थे। ऐसा कहा जाता है कि स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी उनके कीर्तन एवं वादन पर अत्यन्त मुग्ध थे। उनके मुख्य शिष्यों में राय बहादुर, श्री खगेन्द्र नाथ मिश्र, अर्पण देवी, श्री दिलीप कुमार राय तथा श्री परेश कुमार मजुमदार आदि प्रमुख थे। श्री ज्ञान प्रकाश घोष ने भी अपनी अल्पावस्था में खोल वादन तथा पखावज की कुछ नवद्वीप चन्द्र से प्राप्त की थी। श्री ब्रजराखाल दास उनके प्रमुख शिष्य थे।

बंगाल की दूसरी वैष्णव सम्प्रदाय की परम्परा में मुर्शिदाबाद के निवासी श्री वैष्णव चरनदत्त द्वारा फैली। जो कि बृज एवं वैष्णव परम्परा के सम्बन्धित होते हुए भी मुख्यतः विष्णुपुर में फैली। उन्होंने पखावज वादन की अपनी शैली का काफी प्रचार किया था। उनके वंशज में पुत्र, पौत्र एवं वंश परिवार में उनकी कला का विस्तृत विस्तार और विकास हुआ। उनके पुत्र हरिपाद दत्त, गोविन्द प्रसाद दत्त तथा शशीभूषण दत्त पखावज वादन में प्रवीण थे। उनके पौत्र रामरंजन कुन्दु ने भी अपनी कला में काफी ख्याति अर्जित की थी। उन्होंने अपने दादा श्री वैष्णव चरनदत्त के उपरान्त श्री अवधूत बनर्जी से भी शिक्षा प्राप्त की थी। श्री वैष्णव चरण दत्त के शिष्यों में गौरवदास मोहंती हरिपाद बैरागी, भगवान दास, शरण चन्द्र मांडल, नरेन्द्र दत्त अधिकारी, चिन्तामणिदास कालीदास बैरागी आदि प्रमुख हैं। श्री रामरंजन कुन्दु शिष्यों में उनके सुपुत्र रूप नारायण कुन्दु के पश्चात् मुरलीधर ताबाली, मुरारी मोहनदास, जमुनादास तथा ब्रज राखालदास आदि प्रमख हैं।

1– प्रमुख ताल वाद्य पखावज तथा तबले की विभिन्न परम्पराऐं डॉ0 मोहिनी वर्मा पृ0सं0 104 प्रकाशक अनुभव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद।

गया (घराना) की पखावज परम्परा

गया घराने में पखावज वादन कला वर्षो से चली आ रही है। मृदंग सम्राट पं0 वासुदेव उपाध्याय, छोटन पाठक इस घराने के प्रमुख कलाकार थे। पं0 वासुदेव उपाध्याय के दोनों पुत्र पं0 बलदेव उपाध्याय, पं0 राम जी उपाध्याय अपने समय के प्रख्यात पखावज वादक थे। पं0 बलदेव उपाध्याय के सुपुत्र पं0 पन्नालाल उपाध्याय इस परम्परा के प्रसिद्ध पखावज वादक थे। आप आकाशवाणी एवं दूरदर्शन पर उच्च श्रेणी के कलाकार थे। आपके छोटे भाई पं0 मदन मोहन उपाध्याय इस परम्परा के वरिष्ठ एवं जाने–माने तबला एवं पखावज वादक है। एक दशक से टॉप ग्रेड कलाकार है तथा देश–विदेशों में अपनी कला का प्रदर्शन करते आ रहे है। तथा आपके शिष्य एवं पुत्र पं0 मृणाल मोहन उपाध्याय भी इस परम्परा को आगे बढ़ा रहे है।

पं0 वासुदेव उपाध्याय के दूसरे पुत्र पं0 राम जी उपाध्याय को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने I.C.C.R. की ओर से यूरोपीय देशों में प्रचार के लिए भेजा था। आप आकशवाणी तथा दूरदर्शन के टॉप ग्रेड के कलाकार थे। आपके पुत्रों पं0 गौरीशंकर उपाध्याय, पं0 रविशंकर उपाध्याय इस परम्परा को आगे ला रहे है। पं0 गौरीशंकर उपाध्याय के दोनों पुत्र गौरव शंकर उपाध्याय तथा सौरभ शंकर उपाध्याय आकशवाणी एवं दूरदर्शन पर पखावज के नियमित कलाकार हैं पं0 रविशंकर उपाध्याय कत्थक केन्द्र (दिल्ली) में पखावज गुरू के पद पर कार्यरत है एवं आकाशवाणी और दूरदर्शन में उच्च श्रेणी के कलाकार है। और आपके पुत्र ऋषि शंकर उपाध्याय उत्कृष्ट पखावज वादन है। साथ ही आकाशवाणी और दूरदर्शन के ए ग्रेड कलाकार हैं आप की सुपुत्री कु0 महिमा उपाध्याय भी पखावज कला की उभरती हुई कलाकार है।[1]

1– गया घराने के सम्बन्ध मे पं0 मदन मोहन उपाध्याय से जानकारी पर आधारित है।

दरभंगा घराना

दरभंगा घराना केवल ध्रुपद–धमार गायन के लिए ही नहीं अपितु पखावज वादन के लिए भी प्रसिद्ध है। यह ऐसा घराना है जहाँ ध्रुपद गायन एवं पखावज वादन दोनों परम्परा एक साथ विकसित हुई।

श्री उदय कुमार मल्लिक के अनुसार मैंने पं0 राम चतुर मल्लिक से सुना था कि साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व भीम सिंह मल्लिक अपने समय के महान उत्कृष्ट पखावज वादक थे। जिसके साथ कोई भी गायन गाने से घबड़ाते थे। उनकी ही परम्परा चली आ रही है।

कुदऊ सिंह महाराज के प्रमुख शिष्य मदन मोहन जी से देवकीनंदन पाठक ने शिक्षा प्राप्त कर कई शिष्य तैयार किए थे। जिसमें विष्णुदेव पाठक, वासुदेव उपाध्याय, शत्रुंजय प्रसाद तथा केशव जी उल्लेखनीय है।

दरभंगा घराने के प्रतिनिधि वादक पं0 रामाशीष पाठक माने गए हैं आपका जन्म 16 जनवरी 1937 को हुआ। आपके पिता का नाम श्री राम पाठक था जो दरभंगा स्टेट में सितार वादन के रूप में नियुक्त थे। पं0 रामाशीष पाठक ने मृदंग वादन की विधिवत शिक्षा अपने नाना मृदंग सम्राट पं0 विष्णुदेव पाठक से प्राप्त किया। आप सफल पखावज वादक एवं संगतकार थे। 1995 में संगीत नाटक अकादमी अवार्ड 1973 में सुर सिंगार संसद बम्बई द्वारा 'ताल मणि' तथा राष्ट्रपति अवार्ड से सम्मानित है। ओमकारनाथ ठाकुर संगीत विद्यालय पटना ने आपको मृदंग शिरोमणि सम्मान से सम्मानित किया गया। इस सब के अतिरिक्त कई अन्य सम्मान भी आपको प्राप्त हुआ।

विष्णुदेव पाठक के अन्य शिष्य उत्कृष्ट पखावज वादक श्री चन्द्र कुमार मल्लिक हुए। तथा आपके सुपुत्र श्री उदय कुमार मल्लिक ने आपसे विधिवत शिक्षा प्राप्त किया। वर्तमान समय में आप आकाशवाणी एवं दूरदर्शन पर 'ए' ग्रेड कलाकार है आप के प्रमुख शिष्य कृष्ण बल्लभ शुक्ला एवं राजीव मल्लिक प्रमुख है।

पं0 रामाशीष पाठक के छोटे भाई स्व0 राम मोहन पाठक भी पखावज के उत्तम कलाकार थे पं0 रामाशीष पाठक के शिष्यों में सुपुत्रों रंजीत कुमार पाठक, संगीत कुमार पाठक कुमार शुभाशीष पाठक इस कला को आगे ला रहे है साथ ही पृथ्वीराज कुमार, अरूण कुमार उल्लेखनीय है।